★ जलजला ★

रवीन्द्रनाथ ठाकुर

जवाहर पुस्तकालय, मथुरा.

प्रकाशक :

जवाहर पुस्तकालय, मथुरा.

❀

अनुवादक :

शीतलप्रसाद पचौरी

❀

मूल्य :

२·५० न० पै०

❀

प्रथम संस्करण १९६०

❀

मुद्रक :

लोकसाहित्य प्रेस, मथुरा।

एक दृष्टि में....

"विश्व-प्रसिद्ध कथाकार रवीन्द्रनाथ ठाकुर का यह ख्याति-प्राप्त उपन्यास स्वतन्त्रता-आन्दोलन की पृष्ठभूमि पर आधारित है। इसका मूल नाम 'चार अध्याय' है, क्योंकि उपन्यास चार अध्यायों में ही समाप्त हो जाता है।

महान् लेखक की किसी भी रचना की सफलता, श्रेष्ठता और सर्वलोकप्रियता के विषय में जो कुछ भी लिखा जा सकता है, वह सूर्य को दीपक दिखाने वाली बात ही होगी। विश्व के जन-साहित्य और कला में चिरस्मरणीय कलाकार को सर्वोच्च स्थान प्राप्त है।

यहाँ उपन्यास के कुछ अंश दे रहे हैं जिनसे पाठकों को एक दृष्टि में उपन्यास के कथा-सौन्दर्य्य तथा भाव-गम्भीरता की सम्पूर्ण जानकारी हो जायगी—

"जिस प्रकार मार्ग में पड़े किसी पत्थर से बिना गुस्सा किये हाथ लगाता हूँ, उसी प्रकार दुश्मन के सामने भी शान्त और स्थिर बुद्धि से शस्त्र चलाऊँगा। दुश्मन भला है अथवा बुरा यह बात वाद-विवाद के लिए नहीं है। वास्तविकता यह है कि यह शासन विदेशियों का है। और क्योंकि इस शासन के रहने से हमारी आत्मिक शक्ति क्षीण हो रही है, इसीसे मैं इस दशा को

परिवर्तित करना चाहता हूँ। और ऐसा करने से मेरी इन्सानियत ही सिद्ध होगी।"

× × ×

"अपने कार्य में ऐसे स्वार्थ से दूर रहने वाले व्यक्तियों को चाहता हूँ जिनके मन में सेवा की अग्नि धधक रही हो। जो व्यक्ति अपंग- अपाहिज है...साधू सन्यासी जो शरीर पर राख मले फिरते हैं, ऐसे लोगों जो अपने मन की प्राकृतिक प्रवृत्तियों को भी छोड़ चुके होते हैं,..मेरा काम नहीं कर सकते।"

× × ×

"...तुम्हारे खद्दर के सफेद वस्त्रों पर कुछ छींटे पड़े हैं। तो भाँप गया कि तुम्हारे ये वस्त्र ही नहीं—अपितु तुम्हारा हृदय भी प्यार की रंगीनी से रँग गया है...।"

× × ×

" . काञ्चन की जिस जगह जरूरत है वहाँ मैं काञ्चन से काम निकालता हूँ और जहाँ कामिनी से कार्य बनने की संभावना है, मैं वहाँ कामनी की सहायता लेने में नहीं हिचकता।"

× × ×

"...नहीं अतीन नहीं। यह सब अपने जीने के लिए नहीं करते यह अपने प्यार की खातिर हमें करना पड़ता है। प्रेम के अभाव में नारी का जीवन, घर गृहस्थी सब बेकार हो जाते हैं।"

× × ×

"...हमें पराजय स्वीकार नहीं है। हम तो पराजित होने पर भी शत्रु के सामने यही प्रमाणित करेंगे कि हमारा आदर्श उनसे कितना उच्च है। यदि हमारा आदर्श—देश सेवा की हमारी प्रेरणा इतनी उच्च स्तर की न होती तो हार की संभावना समझते हुए भी हमारे अन्दर एक शक्तिशाली शासन से लड़ने को इतनी हिम्मत कहाँ से आती...?

प्रारम्भ

★

इला को स्मरण है कि उसका जन्म कलह और झंझटो के समय हुआ था। उस समय परिवार में शान्ति कदापि नहीं थी। उसकी माता मायामयी की प्रकृति में चिड़चिड़ाहट थी और वे दिनभर झींकती-झाँकती रहा करती थीं। उनके कार्य बिना बिचारे, बिना समझे और सही-गलत को न समझते हुए हुआ करते थे। क्या न्याय और क्या अन्याय हो सकता है, इस बात को उनके मस्तिष्क में उठने का अवसर नहीं था। उनका स्वभाव इतना शुष्म और नीरस था कि उनके दिल को सहृदयता ने स्पर्श तक न किया था। पुत्री इला के मन पर इस वातावरण का प्रभाव अच्छा नहीं पड़ा। बाल्यकाल से ही उसके हृदय में विद्रोह की भावना घर कर गई थी और इसकी वजह थी उसने माँ का अन्यायी शासन और खतरनाक शक्की मिजाज होना।

बिना कसूर किए अस्वीकार करना, माँ के लिए यह समझने का अवसर देता कि लड़की झूठ

बोलती है। इसके विपरीत इला के अन्दर एक बुरीलत पैदा हो गई थी–वह थी सत्य बोलना । सजा का डर भी उसे सच बोलने से नहीं डिगा पाता था और यही कारण था कि इला को दण्ड प्रायः मिलता ही रहता था।

इस सबका नतीज़ा यह हुआ कि इला की प्रकृति में अन्याय और अत्याचार के विरुद्ध विद्रोह बाल्यकाल से घर करता चला गया । माता का विचार था कि लड़कियों का इतना ढीठ होना अच्छा नहीं।

जहां कमजोरी होती है, जुल्म वहाँ अधिक होते हैं, यह बात इला के मन में दृढ़ता पूर्वक जम गई थी। कहने का प्रयोजन यह है कि कमजोरी ही जुल्म को अपने पर सवार करके लाया करती है।

इला के घर में कई एक ऐसे व्यक्ति भी आश्रय पाए हुए थे जिनके लिए इस परिवार के अलावा संसार में कोई और स्थान ही नहीं था। और ये ही वे व्यक्ति थे जिन्होंने इला की माता के बड़प्पन में वृद्धि की थी—और इतना बढ़ा–चढ़ा दिया था कि इसकी कोई हद भी न रही। इन चापलूस लोगों की समझ न्याय-अन्याय की बात तक नहीं पहुँच पाती थी। अतः इला की माँ की मनमानी दिन पर दिन और भी अधिक होने लगी जिससे शान्ति को और भी खतरा पैदा हुआ और वातावरण खराब होगया। ऐसी सभी परिस्थतियों की छाया इला की जिन्दगी में बालापन से ही पड़ गई और अल्पायु में ही उसकी तीव्र इच्छा आजाद होने के लिए मचल उठी।

नरेशदास गुप्त, इला के पिता, विलायत से साइकलौजी (मनोविज्ञान) की सनद प्राप्त करके आए थे। आपने इस प्रिय विषय में उनकी विचारने की शक्ति जितनी सूक्ष्म और तीक्ष्ण थी, उतनी ही पठन-पाठन में उनको ख्याति भी प्राप्त हुई थी। एक प्राइवेट कालेज में उन्होंने कार्य खोज लिया। धन की ओर अथवा दुनियाँदारी बातों की ओर उन्हें कतई ध्यान नहीं था। हर व्यक्ति का विश्वास कर लेना और अपनी हानि करा लेना उनकी प्रकृति में शामिल हो गया था। वारम्बार इन बातों की जानकारी और अनुभव होने के बावजूद उनका यह स्वभाव न बदला। अनेकों बार धोका खाकर भी उन्हें इसका ज्ञान नहीं हुआ। मौन रहकर धोखे को सह लेते और अपने मन में यह विचार लेते कि यह मानव स्वभाव की एक विशेषता है। मुँह पर तो यह बात लाते ही न थे, यहाँ तक कि मन में भी यह बात न उठने पाती।

किन्तु, बुद्धि का अभाव होने के कारण उनकी पत्नी ने उन्हें कभी माफ न किया, अपितु उनको हमेशा झिड़कियाँ सहन करनी पड़ीं। उनकी पत्नी शिकायत की बात भले ही कितनी ही पुरानी क्यों न हो, भूल न पाती थीं और जब चाहे तब उनको कड़ुवे बोल सुना दिया करती थी और इससे उनकी जलन को ठण्डा न होने देती थीं।

हर एक पर विश्वास करने तथा दयालु प्रकृति होने के कारण धोका उठाने तथा दुख उठाने पर भी इला का हृदय दुखी रहा आता था। ठीक उस तरह जिस तरह कि ना-समझ बच्चे पर माँ का करुण स्नेह हमेशा रहा आता है सबसे अधिक दुखी करने वाली बात तो यह थी कि माता इस

कलह का कारण साफ साफ कहती और फिर उनका कहना था कि उनके विचार और अधिक विचार शक्ति दोनों ही पिता से अधिक उन्हें प्राप्त हैं।

प्राय: इला को देखने को मिला करता कि अवसर उसकी माँ पिता का अपमान कर देती थीं और यह देख कर वह दुखी हो उठती, मारे क्रोध के उसकी आखें आंसूओं की झड़ी लगा देती, उसका तकिया भीग-भीग जाता। पिता की धीरता देख कर वह उनको ही दोष देती और उसकी दृष्टि में यह सब सहन करना सरासर अन्याय के विरुद्ध आवाज न उठाता था।

एक दिन जब वह अत्यधिक दुखी हो उठी तो पिता से बोली,“ इस तरह अन्याय का व्यवहार मौन सहलेना भी एक अन्याय ही जाता है पिताजी !”

नरेशबाबू कहने लगे,“किसी की पृकृति का विरोध कर उसे सुधारने की कोशिश करना और गरम लोहे पर हाथ रख कर उसे ठण्डा करना एक समान बात है। इस प्रकार से उस व्यक्ति का वीरत्व स्पष्ट हो सकता है लेकिन शान्ति का स्थापना नहीं हो सकती।”

लेकिन चुप रहने से ही कौन सी शान्ति मिल जाती है ? यह कह कर इला तीव्र गति से बाहर निकल गई।

फिर इला ने अनुभव किया कि अब लोग उसकी माँ की हां में हाँ मिलाने लगे हैं। इस तरह बेकसूर लोगों के

साथ गुप्त परामर्श करके और भी निर्दय और अन्यायपूर्ण व्यवहार किया जाता है। इला को यह बात असह्य थी। वह ऐसे समय आवेग में भर जाती और तेज स्वभाव के साथ माँ के सामने उस व्यक्ति के निर्दोष होने की बात सप्रमाण रखती।

इस कुटुम्ब की एक बात और थी जो इला के हृदय को हमेशा कचोटा करती थी। यह थी उसकी माताजी की छूआ-छूत की प्रकृति। एक दिन इला ने किसी मुसलमान आगन्तुक के बैठने के लिए चटाई बिछादी थी तो माँ ने उसे फेंक दिया था। मां का कहना था कि यदि उसके बैठने को गलीचा बिछाया जाता तो इसमें कोई दोष न था। इला के मन में इस बात का बड़ा तर्क उठा और एक दिन वह पिता से इसके विषय में पूछ बैठी—

"हां पिताजी, यह छूत-अछूत और नहाने-धोने-खाने आदि के झंझट ने औरतों पर ही क्यों धाक जमाई है। इसमें मन और हृदय की बात कहने को कोई गुंजाइश नहीं है, केवल भावनाओं का ही जोर है। फिर अन्धे होकर यंत्र की तरह इन बातों को मानना क्या ठीक है?"

पिता ने उत्तर दिया, पुत्री तुम्हें ज्ञात ही है कि औरतों का मन सहस्रों वर्ष की प्राचीन जड़ता से संयुक्त है। कोई बात क्यों न हो औरतें मान लिया करती हैं, प्रश्न नहीं करती। इसी से समाज इनसे सन्तुष्ट रहता हैं, समाज के ठेकेदार उन्हें पुरस्कार दिया करते हैं। और यह अन्धानुकरण करने की बात जितने अन्धे होकर मानी जाती है, उसका महत्व उतना ही अधिक समझा जाता है। स्त्री स्वभाव के पुरुषों की भी ऐसी ही हालत है।"

आचार-विचार की बात कितना अर्थहीन है, इसके विषय में इला ने माँ से कितनी ही बार वाद-विवाद किया था और इस विषय में जानने की कोशिश की थी, लेकिन उसे हर बार निराशा ही हाथ लगी थी। और यही वजह थी कि माँ की ओर से बारम्बार आघात पाकर इला का मन विद्रोह पर उतारू हो गया।

नरेश बाबू ने लक्ष्य किया था कि कौटुम्बिक क्लेशों के कारण ही उनकी पुत्री का स्वास्थ्य गिरता जा रहा है। उन्हें यह देखकर बड़ा दुख हुआ। इसी बीच एक दिन किसी विशेष अन्यायपूर्ण बात से दुखित इला पिता से कह बैठी—

"पिताजी, मुझे कलकत्ते के किसी छात्रावास में भेज दीजिये।

हालांकि यह दोनों के लिए ही कष्टदायक थी। परन्तु परिवार की परिस्थितियों के कारण माया मयी की इच्छा के विरुद्ध भी उन्होंने इला को वहां से दूर भेज ही दिया और वे स्वयं अब सहानुभूति के अभाव में भी उस अन्यायपूर्ण गृहस्थी में अकेले रहकर अध्यापन और अध्ययन में जुट गए।

एक दिन मायामयी ने ताना देकर कहा, "लड़की को शहर भेज कर मेंम बनाने का विचार है, किन्तु यह स्मरण रखना कि तुम्हारी उस दुलारी बेटी को फिर घर गृहस्थी संभालना कठिन हो जायगा। इसके लिए मुझे दोषी न ठहराना।"

पुत्री के आचरण में आधुनिक विचारों का समान्य और आजादी की पुकार के लक्षण देख कर मायामयी निरन्तर यही आशंका प्रगट किया करती थी कि इला अपनी होने वाली सास की नाक में दम कर देगी, उसके हाड़-मांस को जला देगी।

उधर माँ के व्यवहार के कारण इला के मन में यह धारणा दृढ़ रूप से जमी हुई थी कि लड़कियों को अपने आत्म-सम्मान का ख्याल न करते हुए, न्याय-संगत और असंगत का विचार छोड़ कर शादी के लिए तैयार होना पड़ता है।

इला मेट्रिक पास कर जब कालेज में प्रवेश हुई तभी उसकी माँ स्वर्गवासिनी हुई। नरेश बाबू ने जब-जब पुत्री को विवाह के लिए सहमत करने का प्रयत्न किया।

इला का रूप-सौन्दर्य अपूर्व था फिर वर वालों की प्रार्थनाओं कि कमी नहीं रही लेकिन विवाह की ओर से उसकी इच्छा हट गई थी यह विमुखता जैसे उसका संसार बन गयी थी। अनेकों परीक्षाएँ पास कर लेने के उपरान्त भी इला का विवाह नहीं हो पाया और उसे अविवाहित छोड़कर ही उसके पिता इहलोक से परलोक सिधार गये।

नरेश का छोटा भाई था सुरेश। नरेश ने ही उसका पालन-पोषण किया था और अन्त तक खर्चा देकर पढ़ाया लिखाया था। दो वर्ष के लिये विदेश में भी शिक्षा दिलाई। इसके लिये नरेश बाबू को अपनी पत्नी की ओर से डाँट-फटकार भी सुननी पड़ी, महाजन का ऋणी भी बनना पड़ा।

और आज सुरेश डाक-विभाग में उच्च पदस्थ था। इसी कार्य से उसे अन्य प्रान्तों में घूमना पड़ता था। भाई की मृत्यु के पश्चात इला की जिम्मेदारी उसी पर आ पड़ी और उसने भी इस भार को बड़ी खुशी और प्रेम के साथ ग्रहण कर लिया।

सुरेश की पत्नी का नाम था माधवी। जिस परिवार की वह लड़की थी, उसमें स्त्री शिक्षा का प्रचलन कम ही था। विदेश से लौटा हुआ पति सरकारी कार्य से दूर-दूर भ्रमण करते थे और माधवी को साथ रह कर बाहरी लोगों के साथ मिलना-जुलना पड़ता था। कुछ ही समय में माधवी को विदेशी सभ्यता-शिष्टाचार का अभ्यास हो गया और यहाँ तक कि इङ्गलिश क्लबों में वह अपनी टूटी-फूटी आँग्ल-भाषा को भी हँसी के साथ मुखरित किया करती थीं—भले ही हँसने का कारण न हो, उसे हँसी आ ही जाती थी। इसी प्रकार उसका काम साध जाता था।

उन दिनों सुरेश एक बड़े नगर में आश्रय लिए था। इला उसके घर पर आई थी। उसने अपने चाचा के हृदय को अपने रूप-सौन्दर्य, गुणों और विद्या के कारण गर्व से भर दिया। वह अपने बड़े अधिकारियों, साथियों और विदेशी-मित्रों के मध्य अवसर आने पर इला का जिक्र करते और इस अवसर को खोजते जब कि इला को उनके सामने लाया जा सकेगा। इला को समझने में देर न लगी इसका फल अच्छा नहीं होगा। माधवी अपने निश्चिन्त होने का बहाना करते हुए प्रायः कहने लगी थी—

"चलो, यह भी ठीक हुआ कि विदेशी शिष्टाचार के निभाने का कार्य मुझसे छूट जायगा। भला मुझमें इतनी बुद्धि और विद्या कहाँ जो इसकी जिम्मेदारी सँभालती।"

एसी परिस्थितियों को देख कर इला ने अपने को एक चाहरदीवारी में बन्द कर लिया। सुरेश की पुत्री—अपनी

बहिन सुरमा को पढ़ाने की जिम्मेदारी अपने ऊपर बड़े जोश-खरोश के साथ ओढ़ली और शेष समय निबन्ध लिखने में लगा। लिया। इस निबन्ध का विषय था बंगला के 'मंगल काव्य' और 'चसार' के काव्य की तुलना तथा समालोचना। इसके लिए सुरेश की ओर से भी उसे बढ़ावा मिला और उसने इस बात को चारों ओर फैला दिया।

माधवी को इला की प्रशंसा कतई न भाती थी। उसने पति से कहा, "इला को लड़की को पढ़ाने का कार्य तुरन्त सौंप दिया। अधर मास्टर में कुछ दोष है क्या? कुछ भी कहो... मैं तो यही कहूंगी कि...।

बात काट कर सुरेश ने कहा, "खूब कहती हो जी! वहाँ हमारी इला और वह अधर? दोनों की समानता किसी प्रकार नहीं हो सकती।"

"दो-चार पुस्तकें रट कर उत्तीर्ण हो जाने से ही क्या विद्या प्राप्त कर ली जाती है?" और यह कहते हुए माधवी तिरछी गरदन कर कमरे से बाहर निकल गई।

एक बात और थी सो माधवी पति से कह नहीं पाती थी सुरमा की आयु तेरह वर्ष से आगे थी और आज नहीं तो कल अवश्य ही उसके लिए वर खोजने के लिए दौड़-धूप करनी होगी। यदि उस समय इला यहाँ रही तो आधुनिकता में रंगे लड़के भूल कर भी सुरमा की ओर आकर्षित नहीं होंगे। उनकी आँखें तो गौर वर्ण को देखती हैं, भले ही वह एक दम निस्तेज हो। वे क्या जानते हैं कि सुन्दर किसे कहा जा सकता है।

और ठण्डी आहें सी भर कर माधवी ऐसी ही बातें सोचते हुए इस परिणाम पर पहुँचती कि वे सब बातें पति से कहने में कोई लाभ नहीं। दुनियाई बातों से पुरुष कितना विमुख रहता है, वह कुछ समझ-सोच नहीं पाता, कुछ देख नहीं पाता। इसी से उसका यह विचार स्थिर हो गया कि अच्छा हो यदि किसी तरह शीघ्र अति शीघ्र इला की शादी हो जाय। और इसके लिए वह प्रयत्न भी करने लगी। बिना अधिक परिश्रम किए ही अच्छे-अच्छे लड़के ऐसा प्रस्ताव लेकर आने भी लगे और यह देख कर माधवी का मन इला की शादी करने को ललचने लगता। लेकिन इला हर बार उन्हें निराश करके लौटा देती।

भतीजी की इस बचकनी जिद से सुरेश को घबराहट होने लगी। उसकी पत्नी भी अप्रसन्न हुई। वह सोचा करती कि सयानी लड़कियों को योग्य लड़कों की उपेक्षा नहीं करनी चाहिए, यह अपराध है। इला के चाचा और चाची इस बात से अशंकित हो उठे कि इस आयु में इला के कारण कोई बदनामी न हो जाय। इला की सारी जिम्मेदारी उन पर है अतः उनको भारी बेचैनी होने लगी।

अब इला भी समझने लगी कि वह चाचा के परिवार में कोई बखेड़ा उत्पन्न कर रही है।

इसी बीच नगर में इन्द्रनाथ नामक एक अत्यन्त तेजस्वी व्यक्तित्व का युवक आ पहुंचा। वह देश भर के विद्यार्थियों का राजाधिराज माना जाता था। इन्द्रनाथ के असाधारण तेज और विद्या की ख्याति सब ओर फैली हुई थी।

एक दिन सुरेश ने उसे अपने यहाँ भोजन के लिए निमन्त्रित किया। बस, इसी दिन उसका इला से सर्वप्रथम परिचय हुआ। पूर्व परिचय न होने पर भी इला ने बिना किसी हिचकिचाहट के एक अवसर देख कर इन्द्रनाथ के समीप पहुँच कर कहा—

"क्या आपके पास मेरे योग्य कोई कार्य है जिसमें मैं व्यस्त हो जाऊँ ?"

आजके जमाने में किसी लड़की के मुँह ऐसी से बात सुनना विशेष आश्चर्यजनक नहीं। फिर भी इला के चेहरे पर एक अनोखी चमक देख कर इन्द्रनाथ को चकित होना ही पड़ा। बोले, "अभी-अभी कलकत्ते में लड़कियों के लिए नारायणी हाईस्कूल प्रारम्भ हुआ है। तुम चाहो तो वहाँ मुख्याध्यापिका का पद दिला सकता हूं क्यों सहमत हो ?'

"हाँ,तैयार हूं, यदि आपको मुझ पर भरोसा हो तो ?"

इला के चेहरे पर अपनी तीव्र दृष्टि डाल कर इन्द्रनाथ ने कहा, "लेकिन तुम्हें एक शपथ लेनी होगी कि तुम कभी भी घर-गृहस्थी के बन्धन में नहीं बँधोगी। समाज के हेतु तुम न होकर, तुम अपने देश के लिए होगी।"

मस्तक ऊँचा करके इला कह उठी, "मैं ऐसा प्रण करती हूं।" और इतना कह कर वह चल दी।

उसके चाचा ने उसकी ओर देख कर कहा, "मैं भी तुमसे अब कभी विवाह के लिए नहीं कहूंगा। भले ही तुम मेरे पास रहो। मुहल्लें की छोटी-छोटी लड़कियों के लिए मैं एक पाठशाला खोल दूंगा, इसमें कोई हर्ज नहीं होगा।"

स्नेहाकुल स्वामी की ज्ञानशून्य बात सुनने के बाद इस बात को छोड़ कर चाचा ने दूसरी बात कही—

"लड़की सयानी है। जब वह अपनी जिम्मेदारी अपने पर लेना चाहती है तो इसमें कोई हर्ज नहीं है। तुम क्यों मध्यस्थ बने जाते हो ? मैं स्पष्ट कहे देती हूं कि तुम कुछ भी सोचा करो...मैं तो कुछ चिन्तित नहीं होने की।"

इला ने बीच से ही अपनी बात पर जोर डालते हुए कहा, "मुझे जब काम मिल रहा है...मुझे जाना ही होगा... मैं जरूर जाऊँगी।"

और फिर इला अपने काम में जा लगी। इसके बाद पाँच वर्ष बीत गए। हमारी कहानी अब यहीं से प्रारम्भ होने लगी है।

एक

★

चाय की एक छोटी-सी दुकान और उसीके समीप एक छोटा-सा कमरा। इस कमरे में स्कूली पुस्तकें बिक्री के लिए सजी हुई हैं। इनमें अनेकों तो पुरानी हैं और कुछेक में यूरोप के नाटकों का अनुवाद है। गरीब लड़के इन पुस्तकों को उलट-पुलट कर चले जाते हैं— दूकानदार मना नहीं करता।

दूकान का स्वामी था कन्हाई गुप्ता। कहा जाता था कि कभी वह पुलिस इन्सपैक्टर था और इस समय वह पेन्शन प्राप्त करता चला आ रहा है।

सामने बड़ा मार्ग है और बाईं ओर से एक छोटी-सी गली दूर तक चली गई है। एकाकी बैठे रहकर चाय पीने वाले व्यक्ति यहाँ बैठ कर चाय पीते हैं। ऐसे व्यक्तियों के लिए कमरे में ही एक ओर टाट का पर्दा लगा कर कमरे से अलग जगह बना दी है।

आज इसी कमरे में कुछ विशेष इन्तजाम भी कीया जा रहा है। स्टूल और कुर्सियाँ पर्य्याप्त मात्रा में न होने के कारण लकड़ी बकसों की व्यवस्था की

गयी है। चाय के प्याले भी कइ प्रकार के हैं। उनमें कुछ तो... एनामेल के हैं और कुछ चीनी मिट्टी के। हेण्डल टूटे एक बर्तन में गुलदस्ता रख दिया गया है।

घड़ी के अनुसार अभी तीन बजने को थे और यहाँ पर लड़कों की एक मीटिंग होने वाली थी। इला को निमन्त्रण भेज कर ढाई बजे से ही बुला लिया गया है। साथ ही यह कहा गया था कि एक मिनट की देरी भी सहन नहीं होगी। निमन्त्रण का समय भी ऐसा रखा गया था कि जिससे दूकान पर भीड़-भाड़ न हो। चाय पीने वाले व्यक्ति भी चाय न पीने का बहाना करके चला गया था। इस समय दूकान पर ग्राहकों की भीड़ कम रहती थी। चाय-पान करने वालों के लिए साढ़े-चार बजे से रात १० बजे तक भीड़-भाड़ रहती थी।

इला उचित समय पर आई और लड़कों की कोई खैर-खबर नहीं ले सकेगी। अकेले में बैठे वह सोचने लगी कि कहीं उसने तारीख सुनने में भूल तो नहीं की।"

सहसा पर्दा हटा कर इन्द्रनाथ अन्दर आ पहुंचे। उनको देख कर इला चौंक उठी। यह बात किसी भी दशा में वह सोच नहीं सकी। उसके ख्याल में इन्द्रनाथ का ऐसी जगह पर आना ठीक नहीं था

इन्द्रनाथ के बारे में पाठकों को कुछ बताना भी आवश्यक है कि वह यूरोप में काफी समय तक रहे और 'विज्ञान' में विशेष प्रसिद्धि उन्हें मिल गई और कोई ऊँचा ओहदा प्राप्त करने का उन्हें अधिकार था। योरोपियन शिक्षक-संघ से उन्हें

बड़े-बड़े प्रशंसा-पत्र मिले थे। लेकिन भारत लौटने पर उनकी आशा पूर्ण नहीं हुई। अँग्रेजी शासन उन्हें सन्देह की दृष्टि से देखता था। इसका कारण यह था कि जब वह यूरोप में ही थे तब किसी राजनीति में बदनाम भारतीय व्यक्ति से उनकी भेंट हुई थी। इसी तुच्छ-सी बात को लेकर उन्हें हर काम में परेशानी और अनादर सहन करना पड़ा। किन्तु आखिरकार इंगलैण्ड के किसी प्रसिद्ध-प्रतिष्ठित विज्ञानवेत्ता की सिफारिस पर उन्हें अध्यापन कार्य मिल ही गया लेकिन यहाँ भी उन्हें बड़ी कठिनाई का सामना करना पड़ा। बात यह हुई कि उनसे उच्च पदस्थ अधिकारी में योग्यता का अभाव था, इनकी नियुक्ति से उसे बड़ा जलाया हुआ। योग्यता का जहाँ अभाव होता है, ईर्ष्या वहाँ जन्म लेकर उस अभाव को दूर करने लगती है। यही बात इन्द्रनाथ के साथ अतः हुई। जितनी भी वैज्ञानिक खोजें इन्द्रनाथ ने करनी चाहीं, उन सब में उनसे उच्च पदस्थ व्यक्ति ने बाधाएँ डालीं और अन्त में उनका स्थानान्तर एक ऐसे स्थान को करा दिया गया जहाँ प्रयोगशाला तक भी नहीं थी। इन्द्रनाथ इस चालाकी को समझ गए और यह भी स्पष्ट हो गया कि उनकी जिन्दगी का सबसे बड़ा काम पूर्णता प्राप्त नहीं कर सकता। उनके सामने भविष्य इस प्रकार था कि लकीर के फकीर बने रह कर एक ही मार्ग का चक्कर काटते रहना और अन्त में अल्प-पेन्शन प्राप्त कर जिन्दगी का समाप्त होना। अपनी इस होने वाली बुरी दशा की आशंका उन्हें बराबर रहे आई। उन्हें अपनी योग्यता का पूरा विश्वास था और उन्हें यह भी अनुभव होता था कि यदि वह भारत में न रहकर किसी देश में रहते होते तो वहाँ उन्हें समुचित सम्मानित पद मिला होता।

और एक दिन इन्द्रनाथ ने जर्मन और फ्रांसीसी भाषाएं सिखाने की एक प्राइवेट कक्षा ही खोल दी। कालेज के जीव. शास्त्र और वनस्पति शास्त्र के विद्यार्थियों को सहायता देने का कार्य का भी शुरु कर दिया। यह वह योजना थी जिसके पीछे छिपे-छिपे तौर से होने वाली एक साधना की जड़ कारागार के प्रागंण तक जा पहुँची थी।

उस दिन इला को एकाकी बैठी देख कर इन्द्रनाथ ने पूछा, "इला तुम यहाँ कैसे?"

"यहाँ लड़कों की मीटिंग होने वाली है। उन्होंने मुझे निमन्त्रित किया है। आपने तो मेरा इधर आना निषेध ही कर रखा है। पर वे लोग मुझ से यहीं मिलना चाहते थे।"

"यह बात मुझे पहले ही ज्ञात हो गई थी और ज्ञात होने पर मैंने लड़कों को एक आवश्यक कार्य से अन्यत्र भेज दिया। वे यहाँ नहीं आ सकेंगे। उनकी ओर से मैं तुम से क्षमा चाहता हूं।" इन्द्रनाथ बोले।

"किसलिए?" इला ने पूछा, "आपने मेरा निमंत्रण क्यों स्थगित कराया?"

"यह छिपाना चाहता हूं कि लड़कों के साथ तुम्हारा कोई सम्पर्क है। कल के समाचार-पत्र में देखना तुम्हारे नाम से एक लेख मैंने प्रकाशनार्थ भेजा है।"

"आपने मेरे नाम से भेजा है? यह सत्य है? लोग भी इस बात को मान लेंगे क्या? मेरे नाम से होने पर भी वे पहिचान लेंगे कि वास्तविक लेखक कौन हैं?"

'नहीं, बिल्कुल नहीं।'' इन्द्रनाथ बोले, 'मैंने सोच-समझ कर लिखा ही ऐसा है। उसमें विवेकपूर्ण बातें कम हैं और केवल सीख ही दी है।''

"कैसी ?" अचरज करती इला बोली।

"माल लो तुमने लिखा है कि आजकल छात्र समय असमय न देख कर उत्पात शुरु करके अपने देश को ही हानि पहुँचा रहे हैं। इस उत्पात से देश का भला नहीं हो सकता। बंग प्रदेशीय महिलाओं से मेरी प्रार्थना है कि वे अपने-अपने पुत्रों के मस्तिष्कों को ठण्डा करें '' आगे तुम लिखती हो, "लेकिन दूर रह कर डाँटने-डपटने :से काम नहीं बनने का—यह तो छात्रों के कानों तक पहुँचेगा भी नहीं। उनसे—उस जगह—जहाँ उन्हें देश की सेवा करने का केन्द्र स्थापित किया है, वहीं पहुँच कर उनसे मिला जाय तो लाभ हो सकता है। यदि शासन इसमें कोई सन्देह देखता है तो देखने दें। आप माताएँ ही इन नादान छोकरों का कसूर अपनी जिम्मेदारी समझ कर इन्हें बचा सकती है और तभी आपका जीवन सार्थक होगा।" बस आजकल ऐसी बातें कही जाती हैं जिन्हें नमक-मिर्च डालकर मैंने जायकेदार बना डाला है। यह पढ़ने वालों के मर्म को स्पर्श करेगा। देख लेना इला कि जितने भी भारत माता के सच्चे भक्त होंगे. उनकी आँखों में पढ़-पढ कर अश्रु छलक उठेंगे।...और हाँ यदि तुम पुरुष होतीं तो तुम्हें रायबहादुर का हिसाब भी मिल जाता।"

गम्भीर होकर इला कहने लगी—

"जो कुछ भी आपने लिख दिया, मैं उससे सहमत हूँ

और अनेकों बातें ऐसी भी हैं जिन्हें मेरी बताई भी जा सकती हैं। ऐसे लडके जिनकी प्रकृति ही सर्वस्व खो जाने पर हँस-मुख रहे आने की है, मुझे बहुत प्रिय लगते हैं। ऐसे लड़के आजकल देखे भी नहीं जाते। एक समय था जब ऐसे ही लड़कों के साथ कालिज में पढ़ा करती थी। प्रारम्भ में तो वे मेरे पीछे पड़े रहते थे—मेरे नाम के आगे-पीछे अण्ट-शण्ट शब्द जोड़ते थे श्याम-पर, पर न-जाने क्या-क्या मेरे नाम से लिख देते, मुझे 'छोटी इलायची' कह कर पुकारा करते। जब मैं उनकी ओर दृष्टि उठाती तो सज्जन की तरह आकाश की ओर देख उठते।

"मेरी एक सहेली इन्द्राणी थी, उस बेचारी का शरीर कुछ भारी-भरकम था, वर्ण भी साँवला ही था। लड़कों ने उसका नाम रखा था 'बड़ी इलायची'। इन छोटी-मोटी उत्पात भरी बातों से लड़कियाँ नाराज हो जाती थीं। लेकिन मैं सदा लड़कों की तरफदारी करती। मुझे ज्ञात था कि हम लड़कियों को लड़कों के साथ उठने-बैठने की आदत नहीं थी, इसी से उनका व्यवहार हमारे प्रति इस प्रकार से अर्थ हीन रहता था। यद्यपि वे कभी-कभी बदतमीजी पर भी उतर आया करते थे, तथापि यह बात स्वीकार करनी पड़ेगी कि यह आचरण उनका अपना नहीं होता था। उन्हें लड़कियों के साथ मिलने-जुलने का जैसे-जैसे अभ्यास होने लगा, वैसे-वैसे ही उनके आचरण भी बदलते गए। समुचित और संयत व्यवहार करने लग गए। एक समय जिसे 'छोटी इलायची कहा जाता था अब वह 'इला दीदी' हो गई। और कोई-कोई तो मधुर स्वर भी बोलने लगा। और क्यों न बोलते ? इसमें भय करने की बात नहीं, मैं डरती

भी क्यों ? मेरा अनुभव जन्य कहना तो यह है कि जब तक लड़कियाँ जानते-बूझते भी अजानी बनी लड़कों का शिकार करना नहीं चाहेंगी, तबतक तो उनके प्रति उचित बर्ताव करना आसान है। इसके पश्चात् तो मैंने यहाँ तक देखा कि जो लड़के कुछ अच्छे और सुसभ्य कहे जाते थे और जिनमें असभ्यता नाम तक को नहीं थी, वे पुरुषों की तरह नारियों को भी सम्मानित करते थे ।"

इन्द्रनाथ ने मुस्काते हुए बात काटी, कहा, "अर्थात कलकत्ते के आवारा-गिर्द लड़कों की भाँति जिनकी उच्छृंखलता सीमा न पार कर पाई हो ।"

"जी हाँ, जी हाँ !" इला ने बात पर जोर डालते हुए कहा, "वे लड़के जो मृत्यु के पीछे अभय हो भाग रहे हैं प्रायः मेरी तरह पूर्वी बंगाल के हैं। यदि वे मरने के लिए कटिबद्ध हैं तो मैं घर में छिप कर नहीं रह सकती ।"

एक क्षण ठहर कर वह आगे बोली, "सत्य कहती हूँ मास्टरजी, जैसे-जैसे समय बीत रहा है, प्रतीत होता है कि हमारा यह देश-सेवा एक उद्देश्य न रह कर हम पर नशे की तरह छाता जा रहा है। हमारे कार्य की गति कुछ अस्थिरता के साथ चल रही है, जैसे बिना विचारे कदम बढ़ाया जा रहा हो। यह चीज मुझे बहुत अप्रिय लग रही है। अहा, ऐसे-ऐसे सुन्दर नवयुवक ! क्या इनको अन्धों की तरह किसी गलत मार्ग पर चलाना, उनको बलिदान कराना, उचित कार्य है ? सोचते हुए मेरा हृदय फटने लगता है ।"

इन्द्रनाथ पशोपेश में पड़ गए। एक पल सोचकर उन्होंने कहा—

"इला ! क्या तुम्हारा हृदय भी ऐसी निरुत्साह पूर्ण बातें सोच सकता है ? ऐसे तुम धिक्कार भी सकती हो ? देखो इला, डाक्टरी की पढ़ाई पढ़ते समय जब प्रारम्भ में मुझे शव की चीर-फाड़ करनी पड़ी तब मैं घृणा से अचेत-सा ही हो गया था। इस घृणा से ही घृणा होनी चाहिए। ताकत को हासिल करने में, अपने को योग्य बनाने में कठोर-हृदय बनना ही पड़ेगा। और फिर आखिर में आदमी सीख पाता है क्षमा को। तुम लोगों का कथन है कि लड़कियाँ प्रकृति से ही जननी हैं। इस बात में कुछ गौरव नहीं अनुभव होता कारण कि जीव-जन्तुओं की भी जननी होती हैं। यह कोई विशेष बात नहीं। वास्तव में बडी बात तो यह है तुम लड़कियाँ शक्ति का स्वरूप हो। मोह-माया की कीचड़ लाँघ कर तुम्हें धरती पर कदम रख कर यह बात सिद्ध करनी होगी कि पुरुषों को शक्ति और प्रेरणा प्रदान करने का कार्य नारियों का है।"

इला दुखित स्वर में बोली, "ऐसी ही बड़ी-बड़ी बातें कह कर आप लोगों को फंसाते हैं. उन्हें भ्रमित करते हैं। जो योग्यता हममें है ही नहीं उसको आप हमारे अन्दर बतलाते हैं। यह सब कार्य तो हमारे बूते का नहीं है"

सहसा इन्द्रनाथ ने अपनी बात पर बल दिया, "बात को जितने जोश और जोर के साथ प्रस्तुत किया जाता है, उसकी सफलता उतनी ही आसान हो जाती है। तुम पर हमें जैसा विश्वास होगा तुम भी उसी प्रकार बनती जाओगी। हम पर भी तुम उसी तरह भरोसा रखो कि हमारे आदर्श—हमारे लक्ष्य पूर्ण हो जाँय।"

"सुनने में भली लगती हैं आपकी बातें ! लेकिन अब

ग्रौर समय नहीं है। इस समय तो मैं ही ग्रापसे कुछ कहना चाहती थी।"

"तो ठीक है, कहो !...किन्तु यहाँ नहीं...ग्राग्रो, पीछे के कमरे में चला जाय।"

पर्दे से घिरे हुए ग्रन्धकारपूर्ण कमरे में वे दोनों जा बैठे। वहाँ एक पुरानी टेबिल रखी थी, उसके दोनों ग्रोर दो बैंचे थीं ग्रौर दीवाल पर भारत का एक बड़ा मानचित्र टँगा हुग्रा था।

बात इला ने ही प्रारम्भ की—

"मास्टर जी' ग्रापकी ग्रोर एक बड़ा भारी ग्रन्याय हुग्रा है, मैं कहे बिना रह नहीं सकूँगी।"

इन्द्रनाथ से ऐसी बात तो केवल इला ही कह सकती थी ग्रौर किसी को कहने का साहस नहीं हो सकता था। इला के लिए भी इन्द्रनाथ पर कोई दोषारोपण करना सरल नहीं था ग्रौर इसी से यह बात कहने के लिए कदाचित इला को भी पूरी चेष्टा करनी पड़ी।

देखने में इन्द्रनाथ सुन्दर थे, यह कह देने से ही काम नहीं चल सकता। उनके मुख मन्डल पर एक तीव्र ग्राकर्षण-शक्ति थी जिससे लोग ग्राकर्षित भी होते थे ग्रौर साथ ही भयभीत भी हो जाते थे। लगता था जैसे उनके हृदय की गहनता में कोई बज्र गड़ा हुग्रा है जिसकी गर्जन कानों को तो सुनाई नहीं दे पाता, हां, उसका तेज ग्रवश्य रह-रह कर बाहर फूटता दिखाई देता था।

उनकी मुख-मुद्रा एकदम सज्जनों जैसी थी । कटु से कटु वचन कह देना उनके लिए बड़ा सरल था, ऐसी बात भी वे हँस कर बड़े सरल भाव से कह दिया करते । नाराज होते समय भी हद को पार नहीं करते । अपनी सफाई देनी होती तो केवल इतनी ही सफाई देते जिससे उनकी मर्यादा और आत्मसम्मान बचा रहे । 'फैशन' की ओर उनका कोई ध्यान नहीं था । बाल छोटे-छोटे रखते थे । मुख का रंग गेंहुआ होते हुए भी उस पर लालिमा रहती थी । भृकुटियों के ऊपर मस्तक विशाल और उन्नत था । बुद्धि की तीव्रता के बजाय आँखों की दृष्टि अधिक पैनी थी । उनके अधरों पर सदा दृढ़ निश्चय और प्रभुत्व-भावना की स्पष्ट झलक दीखती थी । कोई भो दावा हो, कितना ही कठिन और महत्वपूर्ण हो, इन्द्रनाथ उसे बड़ी सरलता से प्रस्तुत कर देते थे । उनके सामने किसी के मुख से 'न' निकलता ही न था । लोग समझते थे कि इन्द्रनाथ असाधारण विवेकी पुरुष हैं, कुछ लोगों का ख्याल था कि इन्द्रनाथ असाधारण शक्ति रखते हैं । और यही कारण थे कि कुछ लोगों की उन पर असीम श्रद्धा थी और कुछ लोग उनसे भयभीत रहते थे ।

इला के मुँह से ऐसी बात सुनी तो इन्द्रनाथ गम्भीरता पूर्वक बोले, "इला, मुझसे कौनसा अन्याय हुआ है ?"

"आपने उमा से विवाह कर लेने को क्यों कह दिया है ? वह शादी करना चाहती नहीं, फिर भी ।"

"कौन कहता है कि नहीं चाहती ?"

"वह स्वयं कहती है !" इला उत्तेजित हो उठी ।

"सम्भव है वह स्वयं अपने विषय में भली प्रकार नहीं जानती हो अथवा सत्य बात नहीं करना चाहती।"

"उसने आपके सम्मुख प्रण किया था कि वह विवाह करेगी नहीं।"

"जिस काल में वह प्रण हुआ था, वह बात सच थी लेकिन अब ऐसा नहीं है।" इला की ओर अपनी तेज निगाहें फेंक कर इन्द्रनाथ आगे बोले—"देखो इला, मुँह से कोई बात कह देना ही झूँठ और सच का द्योतक नहीं। उमा स्वयं प्रण तोड़ने जा रही थी। मैंने उसे ऐसा कह कर प्रण भंग करने के अपराध से बचाया है।"

यह कहने के बाद इला के मुख पर व्यङ्गपूर्ण मुस्कान खिल उठी। इला के मन को अभी शान्ति नहीं मिली थी।

तर्क करती हुई इला बोली, "प्रण उसी ने किया था, स्थिर रखने अथवा तोड़ने की जिम्मेदारी भी उसकी ही थी। यदि वह प्रण पूर्ण नहीं होता तो क्या बिगड़ जाता और अपराध हो जाने पर भी क्या हो जाता?"

"तुम समझ नहीं पा रही हो, इला! वह अपना केवल प्रण ही नहीं भंग करती अपितु साथ ही साथ वह अनेक झंझट भी खड़े कर देती। हम सभी को उससे हानि पहुँचती।"

"किन्तु वह बहुत रो रही है।"

"उफ! रो रही है?" इन्द्रनाथ का स्वर व्यंग्यपूर्ण हो उठा था, "फिर तो और अधिक बिलम्ब करना ठीक नहीं।

बिलम्ब होने से उसे रोने का समय अधिक मिलेगा। सोचता हूं दो-एक दिन में ही उसकी शादी हो जानी चाहिए।"

"लेकिन मास्टरजी आप यह क्यों भूलते हैं कि दो-एक दिन के बाद भी उसका बहुत बड़ी जीवन पड़ा हुआ है।'

"नहीं इला, मैं भूलता नहीं। भूलती तुम हो। लड़कियों का विवाह से पूर्व का रोना 'प्रभाते मेघाडम्बरम्' जैसी बात है।" और इतना कह इन्द्रनाथ हंसने लगे।

"आप बहुत निष्ठुर हैं।" मुँह फुलाकर इला ने मान लिया।

"तुम ठीक कहती हो।" इन्द्रनाथ बोले, "मैं निष्ठुर हूं... ठीक परमात्मा की भाँति! परमात्मा मनुष्य को जितना प्यार करते हैं उतना ही निष्ठुरता का व्यवहार भी करते हैं।"

"आप नहीं जानते मास्टरजी कि उमा सुकुमार से प्रेम करती है।"

"जानता हूँ। उसी सुकुमार को हटाए दे रहा हूँ।"

"सुकुमार से विवाह करने में क्या हानि होती?" इला के हृदय मे विद्रोह उबाल ले रहा था।

"देखो इला उमा के साथ सुकुमार का विवाह करना सुकुमार का जीवन नष्ट करना एक समान है। मैं यह चाहता नहीं। सुकुमार का ऐसा कौनसा कसूर है कि उसे यह सजा दी जाय। सुकुमार जैसे युवक हमारे पास हैं ही कितने? उसे खा कर, हमारे अनेकों काम रुक जाएंगे, यह भी तो सोचता है।"

"यदि मान लिया जाय कि सुकुमार स्वयं ही उमा से विवाह करने को तैयार हो तो ?" इला ने तर्क किया ।

"यह बात अत्याधिक संभव है और इसी से शीघ्र अति शीघ्र ही मैं उसे हटा कर भोगीलाल के साथ उमा का विवाह करना चाहता हूं। सुकुमार बहुत सहज स्वभाव का लड़का है, उसे फंसाना लड़कियों के लिए बहुत सरल बात है। वह जब साधारणतः हिल-मिल कर बातचीत करने लगता है तो लड़कियाँ समझने लगती हैं कि वह प्रेम करता है और फिर वे दो-चार अश्रु कर रुच सिद्ध करना चाहती है ।...सुनकर तुम क्रोध कर रही हो, न इला ?'

"क्रोध क्यों करूँगी !' इला ने सिर हिला कर कहा, "किन्तु मास्टर जी, मुझे यह भी ज्ञात है कि लड़कियाँ चालाकी खेल कर लड़कों के साथ अन्याय तथा अत्याचार करती हैं और लड़कों को कसूरवार बनाती हैं अब समय बदल गया है और सत्य क्या है यह बात खोजने के लिए न्याय का विचार किया जाना चाहिए। मैं स्पष्ट भाष्य करती हूं, इसी से लड़कियाँ मुझसे नाराज रहती हैं। और हाँ, यह तो बताइए कि जिस भोगीलाल के साथ उमा की शादी की जा रही है, उसका क्या विचार है ?"

यह सुन कर इन्द्रनाथ को हँसी आ गई, बोले—

"वह भला मानुस दुनियाँ की फरेब भरी बातों को तनिक भी नहीं जानता। प्रत्येक लड़की को वह ईश्वर प्रदत्त अपूर्व वस्तु समझता है और वह किसी को भी अपनी पत्नी के रूप में पाकर धन्य हो उठेगा।...मैं ऐसे बुद्धू टाइप के लड़कों को अपने इस संगठन से दूर ही रखना चाहता हूँ।"

व्यंगपूर्ण मुस्कान के साथ इन्द्रनाथ ही आगे बोले, "कूड़ा कचरा फेंकने के लिए मैं सबसे अच्छा कूड़ा दान विवाह को ही समझा है। इसी से भोगीलाल के साथ उमा का विवाह करा के मैं अपने मध्य से दोनों को दूर कर देना चाहता हूं।" और यह कह कर इन्द्रनाथ का चेहरा गम्भीर हो गया।

एक पल कुछ सोचती-सी इला कह उठी, "ये सब बखेड़े उठना सम्भव होते हुए भी जान कर आपने अपने संगठन में स्त्री-पुरुषों को क्यों साथ लिया?"

"अपने कार्य में ऐसे स्वार्थ से दूर रहने वाले व्यक्तियों को चाहता हूँ जिनके मन में सेवा की अग्नि धधक रही हो। जो व्यक्ति अपंग-अपाहिज हैं उनसे मेरा काम नहीं होने का। साधू-सन्यासी जो शरीर पर राख मले फिरते हैं, ऐसे लोगों से जो अपने मन की प्राकृतिक प्रवृत्तियों को भी छोड़ चुके होते हैं, ऐसे लोग मेरा काम नहीं कर सकते। जब देख पाऊँगा कि अपने मन की इस अग्नि से कोई व्यक्ति अपने दल को ही हानि पहुँचा रहा है तो चुपके से उसे दल से बाहर फेंक दूँगा। मेरे संगठन में तो स्वार्थ रहित, त्याग करने वाले और ताकतवर व्यक्तियों की जरूरत है। हमारा काम सारे देश में अग्नि प्रज्जवलित कर देना है—ऐसे नवयुवक जिनके हृदयों विद्रोहाग्नि धधक रही हो मेरे काम के लिए उपयुक्त है। वे ऐसे भी न हों जो अपने हृदय की इस अग्नि को छिपाने में असमर्थ हों क्यों कि हमारा काम है देश में छिपे-छिपे तौर से शासन के विरुद्ध विद्रोह खड़ा करना।"

गम्भीर बनी इला यह सब चुप-चाप सुने जा रही थी। कुछ समय उपरान्त आँखें नीचे झुकाए वह कह उठी—

"आप मुझे भी अपने संघ से अलहदा कर दीजिए, मास्टर जी ! कदाचित् मुझसे आपका यह कार्य आगे न हो सके ।"

"ऐसा क्यों ? इससे तो हमें बहुत बड़ी हानि होगी। हम यह नहीं कर सकते ।"

"आपको नहीं ज्ञात...।"

"कौन कहता है कि ज्ञात नहीं ।" इन्द्रनाथ बात काटते हुए कह उठे, "मैं सब कुछ देखता हूँ, जानता हूं और समझता भी हूं। तुम्हारे अन्दर जो धीरे-धीरे बदल होती जा रही है, वह मेरी दृष्टि से दूर नहीं। सहसा एक दिन देखा था कि तुम्हारे खद्दर के सफेद वस्त्रों पर कुछ छींट पड़े हैं तो मैं भांप गया कि तुम्हारे ये वस्त्र नहीं—अपितु, तुम्हाराहृदय भी प्यार की रंगीनी से रङ्ग गया है।...उस समय से देखा है कि तुम्हारे कान किस आहट के सुनने में लगे रहते हैं। गत शुक्रवार को तुम्हारे कमरे पर पहुँचा था तो तुम कोई अन्य व्यक्ति समझ कर चौंक उठी थीं। मैंने यह भी लक्ष्य किया कि तुम्हें संभलने में भी देर लगी थी। लज्जा न करो, इसमें लजाने की कौन सी बात है, इला ?"

इला के कान तथा चेहरा लाल हो गये थे। वह मौन बैठी रही।

इन्द्रनाथ ही आगे कहने लगे—

"मैं समझ गया हूँ कि तुम किसी को प्रेम करने लगी हो। यह सच है न, इला ? यदि सच भी हो तो कोई हानि

नहीं। तुम्हारा दिल पत्थर से तो बना नहीं। तुम्हें किससे प्रेम है, यह भी मैं जानता हूं। इसमें लजाने और पश्चाताप करने की कोई बात नहीं है।"

"किन्तु मास्टर जी," दुविधा में पड़ी इला बोली, "आपने ही कहा था कि एक ओर मन लगा कर ही तन-मन से देश की सेवा करनी होगी। और अब हालत यहाँ तक हो गई है कि मैं सदा के लिए ऐसा नहीं कर सकती।"

"हाँ, अन्य लोगों के लिए ऐसा माना भी जा सकता है, किन्तु तुम्हारे लिए नहीं। तुम्हें प्यार करने वाला ऐसा कमजोर दिल व्यक्ति न होना चाहिए जिससे तुम अपनी प्रतिज्ञा ही भूल जाओ।"

"किन्तु मास्टर जी···।"

"किन्तु-परन्तु की कोई बात ही नहीं है। तुमको मैं किसी भी दशा में नहीं छोड़ सकता।"

इला पुनः बोली, "लेकिन मास्टर जी, आप यह तो जानते ही हैं कि मुझसे आपका कोई कार्य बनता नहीं है... फिर—?"

तुमसे किसी काम को कराने की मेरी इच्छा भी नहीं है इला। किसी विशेष कार्य के बारे में मुझे तुम्हें बताना भी नहीं है...फिर भी मैं तुम्हें छोड़ नहीं सकता।"

इला के गंभीर चेहरे की ओर देख कर, इसके आन्तरिक हृदय की बात जानने की चेष्टा करते हुए इन्द्रनाथ पुनः बोले—

तुम कैसे जान पाओगी कि ये लड़के तुमसे कितने प्रभावित हैं। तुम्हारे हाथ से जब इन लड़कों के माथे पर रोरी

का लाल टीका लगता है तब इनके हृदय में उत्साह की आग कैसी प्रज्वलित हो उठती है, इसकी कल्पना तुम नहीं कर पाओगी। विद्यालय का काम तो नाम-मात्र का है और तुम्हें जो वेतन मिलता है, इसी विशेष कार्य के लिए मिलता है। हम लोग 'कामिनी और कांचन' त्यागी सन्यासी तो हैं नहीं। कांचन की जिस जगह जरूरत है, वहाँ मैं कांचन से काम निकालता हूँ और जहाँ कामिनी से कार्य बनने की सम्भावना है, मैं वहाँ कामिनी की सहायता लेने में नहीं हिचकता।"

इला गंभीर बनी सभी बातें मौन रह सुनती रही। एक क्षण पशोपेश में पड़ने के बाद बोली, "आप से मैं कोई बात छिपाना नहीं चाहती और न मिथ्या ही बोलूँगी। मेरे दिल में यह बात बलवती होती जा रही कि में इस प्रेम के आगे झुकती चली जाऊँगी, इसके आगे सभी आकर्षण और प्रेम फीके पड़ते जा रहे हैं। मैं एकदम मजबूर हूँ मास्टर जी।"

"भय की कोई बात नहीं।" इन्द्रनाथ मुस्कराते हुए बोले, "तुम खूब प्रेम करो। इससे मेरा काम बिगड़ने वाला नहीं। देश को अपनी धरती को जो लोग केवल माता-माता कह पुकारते हैं, वे वृद्ध हो जाने पर भी बच्चे बने रहते हैं। देश इन वृद्ध बच्चों की माता नहीं हो सकती। मेरे सामने देश का जो सच्चा स्वरूप है वह है 'अर्द्धनारीश्वर' का। पुरुष और नारी की मिली-जुली सेवा से ही देश की सेवा सम्भव है। लेकिन यह मिलन देश के हित के लिए होना चाहिए, इसे परिवार के पिंजड़े में कैद करके दुर्बल न बनाओ इला।"

"आप यह कैसी-कैसी बातें कर रहे हैं?" इला बोली,

"अभी तो आप उमा के विवाह के लिए शीघ्रता करने की बात कह रहे थे ?"

बीच से रोक कर इन्द्रनाथ बोले, "उमा, भोगीलाल, कालू—ये लोग क्या जाने कि विशुद्ध प्रेम क्या वस्तु है। विशुद्ध प्रेम में जो सर्वस्व त्याग की बात है, इसे ये लोग सह भी सकेंगे क्या ? विवाह तक पहुँचते न पहुँचते इनके प्रेम का रंग उतर जायगा और फिर प्रेम का अन्त हो जायगा। इसी से वक्त रहते इन्हें विवाह के निकट पहुँचा रहा हूं। ...खैर... छोड़ो इस बात को...सुना है कि परसों रात्रि में तुम्हारे कमरे में दस्यु ने प्रवेश किया था।"

"हाँ, किया तो था।"

"तो तुमने 'जुजुत्सु' वाले सीखे हुए दाव-पेंच से लाभ उठाया या नहीं ?"

हँस पड़ी इला। कहने लगी—

"उठाया क्यों नहीं ? मेरे विचार से दस्यु का हाथ टूट गया था।"

"लेकिन हाथ तोड़ते वक्त तुम्हारे मन में कोई दुविधा या हिचक अथवा हाय-हू तो नहीं हुई थी ?"

"हाँ, उठना सम्भव तो था। किन्तु मुझे भय था कि यह मेरी इज्जत खराब करेगा। ...हाँ, एक बात और यदि वह पीड़ा से व्याकुल हो पराजित हो जाता तो मैं उसका हाथ न तोड़ पाती।"

"वह कौन व्यक्ति था, तुमने उसे पहिचाना ?"

"नहीं तो ! अन्धकार के कारण देख न सकी ।"

"यदि देख लेती तो ज्ञात होता कि वह अनीत था ।"

घबरा उठी इला । बोली—

"सचमुच ?...हमारा ही अनीत ?...फिर तो मैंने उसका हाथ तोड़ कर बड़ा अन्याय कर डाला । बेचारा अभी लड़का ही है ।"

"मैंने ही तुम्हारे समीप भेजा था ।"

इला के अचरज की सीमा न रही । पूछा—

"आपने ही भेजा था ! क्यों ? ऐसा किस कारण किया आपने ?,'

मुस्कान के साथ बोले इन्द्रनाथ—

"दोनों की परीक्षा लेनी थी । तुम्हारी भी और उसकी भी जो होगई ।"

"आप बड़े निठुर हैं । बताइए तो ऐसा किस कारण किया गया ?'

"क्यों क्या हो गया ?'' हँस कर इन्द्रनाथ कहने लगे— "उस वक्त मैं नीचे के ही कमरे में मौजूद था तुरन्त उसकी हड्डी को वहीं बिठा दिया । अपने को तुम डरपोक समझती हो। सोचती हो कि तुम्हें कष्ट सहन नहीं । मैं तुम्हें यही जताना चाहता था कि विपत के समय कायरता दिखलाना स्वाभाविक बात नहीं । उस वक्त निडर होकर कर्तव्य को पालना तथा अपनी रक्षा करनी ही पड़ती है । उस दिन मैंने तुमसे उस बकरी के बच्चे को पिस्तौल से मारने को कहा था और तुमने कहा था कि यह कार्य तुम कदापि नहीं कर सकतीं । लेकिन

तुम्हारी फुफेरी बहिन ने अपनी वीरता दिखाई और उसे गोली मारदी। गोली से उसकी जान तो नहीं गई किन्तु उसका पाँव टूट गया और वह जमीन पर गिर गया था। यह देख कर तुम्हारी बहिन ने अपनी निठुराई दिखाने का बहाना करते हुए कहाका लगाया था। मैं जानता था कि वह हँसी झूँठी थी और वह सारी रात सो नहीं पाई थी।" एक पल चुप रह कर वह उन्होंने आगे कहा—

"मान लिया जाय कि एक शेर तुम पर आक्रमण करता है। उस समय यदि तुम कायरता नहीं दिखाओगी तो तुम उसे मार सकती हो...क्यों ऐसा कर सकोगी न ! किसी प्रकार की हिचक तो नहीं होगी तुम्हारे मन में ? क्यों ठीक है न इला ? हां, ऐसा करना स्वाभाविक ही है। इसी तरह का एक बाघ हमारे सामने है, हम उसे स्पष्ट देख पा रहे हैं और माया-मोह आदि छोड़ कर उसे मारने के लिये कटिवद्ध हैं। कुरुक्षेत्र के मैदान में भगवान् श्रीकृष्ण ने भी अर्जुन को यही बात समझाई थी कि कठोर होना हर दशा में तो ठीक वहीं लेकिन अपने कर्तव्य के पालन करने में निर्दयता होनी ही चाहिए। समझ गईं न ?"

"जी समझ गई।"

"यदि समझ गई हो तो एक बात पूछता हूँ कि तुम अनीत को प्यार करती हो ?"

इला कोई उत्तर न दे सकी, चुप ही बैठी रही।

इन्द्रनाथ ही फिर बोले—"यदि अनीत हम सभी को किसी विपत्ति में डाल दे तो क्या तुम उसे अपने हाथों उसे मौत के घाट उतार सकोगी ?"

इला गम्भीर होती हुई कह उठी—

"यदि यह बात उसके लिए सम्भव होती तो मैं 'हां' करने में नहीं हिचकती। लेकिन यह तो अतीन के लिये एकदम असम्भव है।"

"और यदि सम्भव हो तो?"

इला मौन रही। इस सवाल का जवाब देना उसको एकदम कठिन लगा तभी तो वह पशोपेश में पड़ कर कहने लगी—

" 'हाँ न' इस वक्त कुछ भी कहा जा सकता है लेकिन यदि यह बात सच ही न हो तो? क्या मैं अपने को भली प्रकार पहिचानती हूँ कि यह बात निश्चय के साथ कह दूँ?"

"तुमको अपने को पहिचानना ही होगा और इस सवाल का सही जवाब भी देना होगा। हालत कितने भी कठिन क्यों न हों लेकिन यह सब मुमकिन है, ऐसा विचार करके तुम्हें अपने को तैयार रखना ही होगा।"

"किन्तु मास्टर जी!" इला ने कहा, "मैं आपसे फिर भी कहूँगी कि आपने मुझे इस कार्य के लिए चुन कर भूल की है।"

"और मैं निश्चय के साथ कहता हूँ कि मैंने कोई भूल नहीं की।"

"आपके चरणों में गिरती हूँ मास्टर जी, अतीन को आप अपने काम से अवकाश दे दें" इला की आवाज में करुणा भरी विनती थी।

कठोर होकर इन्द्रनाथ बोले, " मैं कौन हूँ अवकाश देने वाला ? वह अपनी के बंधन में स्वयं बँधा है। उसके मन का यह संकोच कभी दूर नहीं होने का। उसके हृदय के साथ उसके काम का सदा विरोध रहेगा और हर क्षण उसके हृदय पर आघात होता रहेगा। इतने पर भी वह अपने मन पर काबू नहीं रख सकेगा। अपने सम्मान को स्थिर रखने के लिए ही वह हमारे साथ आखिर तक रहेगा।'

"तो मास्टर जी ! आप से क्या आदमी पहिचानने में कभी त्रुटि नहीं होती ?"

"होती क्यों नहीं ! बहुत से ऐसे व्यक्ति होते हैं जिनकी प्रकृति में दो प्रकार की बनावट होती है और दोनों में कोई समता नहीं देखी जाती। लेकिन वे दोनों होती हैं ठीक ही। ऐसे व्यक्ति अपने को भी भली प्रकार नहीं समझ पाते।"

इसी समय बाहर से किसी ने मोटी आवाज से पुकारा—'भाई साहिब !"

"कौन ?...कन्हाई...आओ भाई आओ...अन्दर आ जाओ !" इन्द्रनाथ ने उत्तर दिया।

कन्हाई कमरे में आ गया। छोटे कद का मोटा और अधेड़ आयु का व्यक्ति। लगभग एक सप्ताह से बाल बनाने का सामान नहीं मिला था, इसी से दाढ़ी-मूछ के बाल बढ़े हुए थे। सिर का आगे का भाग गंजा था। धोती धारण किए हुए था और ऊपर खद्दर की मोटी चादर जिसने कदाचित् कभी धोबी के घर का द्वार भी न देखा था। बदन नंगा था, वह कुर्त्ता नहीं पहने था। संघ की ओर से कन्हाई को लोगों के खाने-पीने के

प्रबन्ध का कार्य सौंपा गया था। कन्हाई की जो चाय की दूकान थी उसके पीछे यही रहस्य छिपा हुआ था।

अपनी स्वाभाविक दबी जुबान से कन्हाई इन्द्रनाथ से कहने लगा—

"भाई तुम तो साधू-सन्यासियों की भाँति बात करने के लिए मशहूर हो लेकिन लगता है कि अब इला बहिन तुम्हारी इस ख्याति को मिट्टी में मिला देंगी।"

इन्द्रनाथ हँसने लगे।

बोले, "कोई हानि नहीं। बात करने का हम प्रयत्न करते हैं और यही हमारा नियम भी है। कभी-कभी इस नियम को भंग भी करना पड़ता है और इससे हमारे नियम की रक्षा ही होती है। क्यों कन्हाई ठीक है न! इला एक ऐसी लड़की है जो खुद बातें न करके दूसरों को बात करने का ही अवसर देती है...यही इसकी बड़ी भारी विशेषता है।"

"क्या कहा भाई? इला बहिन बात नहीं करतीं? तुम्हें क्या पता तुम्हारे आगे चुप भले ही रहें लेकिन जहाँ इनका मुँह खुलता है कि बातों की बाढ़-सी आ जाती है। मैं तो मूर्ख आदमी हूँ...लेकिन जैसे ही मैं इला बहिन की आहट पाता हूँ हिसाब-किताब की बहियाँ फैंक कर मैं आड़ में खड़ा हो जाता हूं जिससे इनकी बातें सुन सकूँ। अच्छा छोड़ो भी इन बातों को...अब मेरी आवाज में मधुरता नहीं रही लेकिन थोड़े में जो कहूँगा वह तुम्हारे हृदय तक असर करेगी "

अब तक इला शान्त बैठी दोनों व्यक्तियों की बातें सुन

रही थी। अब तुरन्त खड़ी हो गई। उसको जाने को तैयार देख कर इन्द्रनाथ बोले—

"जाने से पूर्व इला मैं तुम्हें एक बात और बताना चाहता हूं। शायद तुम्हें पता न हो कि मैं दल के लड़कों के सामने तुम्हारी बुराई करता हूं और यहाँ तक मैंने कहा है कि आवश्यकता पड़ने पर एक दिन तुमको दल से अलग भी किया जाएगा। और यह भी कहा है कि तुम अतीन को बिगाड़ रही हो। अतीन के अलावा और न जाने किन-किन को बिगाड़ोगी।'

"इसी बात को आप क्यों बार-बार दुहराते हैं। कहीं यह सच ही न हो जाय। न मालूम इतने दिनों तक एक साथ काम करने के बावजूद मेरा यहाँ के वातावरण में मन नहीं लगता।"

"यह बात मैं स्वीकार करता हूं लेकिन फिर भी मुझे तुम पर कोई सन्देह नहीं। अचरज तो इस बात का है कि कोई संदेह न होने पर भी मैं तुम्हारी बुराई लड़कों के सामने किया करता हूँ। लोगों का कहना है कि तुम्हारा कोई दुश्मन नहीं है। किन्तु जब मैं तुम्हारी बुराई करने लगता हूँ तो जितने तुम्हारे भक्त हैं, जो तुम्हें प्यार करते हैं अथवा तुम पर श्रद्धा रखते हैं, उनमें से एक-तिहाई लड़कों के दिल तुम्हारी बुराई सुनने को आतुर हो उठते हैं। वे गम्भीरता पूर्वक तुम्हारी बुराई नहीं सुनते। ऐसे लड़कों के नाम मैंने अपनी डायरी में लिख रखे हैं और इन पर मैं भरोसा नहीं रखता।" यह सब कहते हुए इन्द्रनाथ के अधरों पर एक व्यंग्यपूर्ण मुस्कान झलक उठी।

"किन्तु मास्टर जी !" इला कहने लगी, "मेरा विचार है कि दूसरों को बुराई सुनना उनको भला लगता है, इसीसे वे बुराई करते हैं, मेरे से अप्रसन्न है इसलिये नहीं।"

इन्द्रनाथ धीमे-से मुस्कराने लगे।

बोले, "तुमने 'अजातशत्रु' शब्द तो सुना ही होगा, इला ! इनमें से ऐसा कोई नहीं है जिसका जन्म से कोई न कोई शत्रु न हो। बंग प्रान्त में स्वतन्त्रता के लिए जितने भी प्रयत्न किये गए हैं, उन्होंने उनका विरोध कर उनमें बाधा डाल कर उन्हें मिट्टी कर दिया है। ऐसी ही इनकी भी प्रकृति है।"

इसके पश्चात इला ने एक शब्द भीं नहीं कहा और वह चल पड़ी। जब वह दरवाजे पर पहुँची तो इन्द्रनाथ से बोली—

"आपकी बात मुझे स्मरण रहेगी, मास्टर जी ! मैं तैयार रहूँगी हमेशा। दल से हटाने का अवसर आवे तो मुझे बता दीजियेगा, मैं चुपचाप गायब हो जाऊँगी।" और इतना कह कर वह चली गई।

इन्द्रनाथ न जाने क्या सोचने लगे। कुछ क्षणोपरान्त अपना मुँह ऊपर उठाते हुए बोले—"कन्हाई, आज तुम इतने घबराये हुए से क्यों लग रहे हो ? क्या बात हुई ?"

"अजी कुछ न पूछो ! अभी हाल की बात है कि रास्ते में पड़ी मेज पर बैठे तीन-चार गुण्डे जैसे लड़के बड़ी-बड़ी वीरता की बातें बना रहे थे। आवाज से प्रतीत हुआ कि वे 'जानबुल' के पालतू बच्छड़े अर्थात अंग्रेज सरकार के खुफिया

है। मैंने उनके नाम की सूचना पुलिस को दे दी है कि वे गदर की बात और विद्रोह की षड़यन्त्र कर रहे थे।"

गम्भीर हो इन्द्रनाथ बोले, "तुमने उनकी बात समझने में कोई भूल तो नहीं की कन्हाई ?"

"अजी नहीं! सन्देह न होने से गलत सन्देह होजाना ठीक है। यदि वे निरे मूर्ख थे तो उन्हें कोई बचा नहीं सकेगा और सचमुच ही खुफिया आदमी थे तो उनका कोई कुछ कर भी नहीं सकेगा। देख लेना भइया मेरी सूचना से लाभ ही होगा। मालूम है वे क्या क्या कह रहे थे? उनकी कानाफूसी का मतलब यह था कि इस दुष्ट सरकार को पलटने के लिए रक्त की सरिता ही बहानी होगी। हाँ, एक और दिन की बात है कि मैं जब शाम को बैठा हिसाब का मिलान कर रहा था तो सहसा ही धूल-मिट्टी से सना, फटे वस्त्रों में लिपटा एक लड़का मुझसे आकर बोला--

'मुझे पच्चीस रुपयों की आवश्यकता है। अभी-अभी दीनाजपुर जाना है।'

"सिफारिश के लिये उसने मथुरा व मामा का नाम लिया। मैं उस पर क्रोध से उबल पड़ा और चिल्ला कर बोला, 'शैतान! तेरी यह हिमाकत! चला जा अभी! नहीं तो पुलिस को खबर कर पकड़वा दूँगा। क्या कहा जाय भाई साहब उस समय यदि मेरे पास थोड़ा भी समय होता तो मैं इस परिहास का अन्त भी देख लेता। बच्चे को सीधा थाने ले जाकर बन्द करा देता। कम से कम पता तो लग जाता कि वह हमारे संघ का था अथवा खुफिया का आदमी।"

एक क्षण शान्त रह कर वह हँसता हुआ आगे बोला, "किन्तु तुम्हारे लड़कों को भी धन्य है। इतने मूर्ख हैं कि मुझ पर क्रोध करने लगे। वे पड़ौस के कमरे में बैठे चाय पी रहे थे। गुल-गपाड़ा सुन कर निकल आए और जब मैंने रुपये देने से इन्कार कर दिया तो आपस में चन्दा करने लगे। सबने अपनी जेबों को टटोल-टटोल कर दे दिया और तेरह आने से अधिक नहीं हुआ। इसी बीच वह लड़का चुप चाप न जाने कहाँ खिसक गया।"

मौन रहे आकर इन्द्रनाथ परिस्थिति की गम्भीरता का विचार कर रहे थे। एक ठण्डी आह-सी भर कर वह बोले—

"तो तुम्हारी ओर भी पुलिस की नजर लगी हुई है। अब क्या करें? पुलिस की आंख में धूल कैसे झोंकी जाय?"

कन्हाई बोला, "हां, पुलिस बेशक हमारे ऊपर शक कर रही है। तुम अपना यह संघ तोड़ दो और लड़कों को इधर-उधर भेज दो और देखो प्रत्येक लड़का कुछ न कुछ करता ही रहे, कोई खाली न रहे।"

इन्द्रनाथ बोले, "यही उचित है। मेरी भी इच्छा है कि मैं भी किसी व्यवसाय में लग जाऊँ। भले ही लाभ न हो और मुझे दीवालिया होना पड़े। इससे दीवालियापन का भी आनन्द मिल जायगा और कुछ अनुभव भी मिलेगा।"

व्यंग्य करता हुआ कन्हाई बोला, "तुम्हें दीवालिया बनना ही होगा, आज नहीं तो कल-एक दिन अवश्य बनना होगा। तुम्हारा जैसा काम है उसमें यह जरूरी होना ही है। तुम भी यह भली प्रकार जानते हो कि लोग जो दिवाला निका-

लते हैं वे अन-जाने में नहीं होते। वे दिवाला समझ-बूझ कर निकाला करते हैं। वे अपनी हानि स्वयं करते हैं और हानि वाले मार्ग से जानते हुए भी हटना नहीं चाहते। यही है मृत्य का आकर्षण, इससे अपने को बचाना दुष्कर है। खैर जाने दो इन बातों को इस वक्त इस विषय की बातों से कोई लाभ नहीं होने का। एक सवाल मेरे दिल में उठा है—तुमसे पूछना है कि इला जैसी सुन्दर लड़की कहीं देखने में नहीं आती यह बात तुम स्वीकार करते हो ?"

"हां, स्वीकार करता हूं कन्हाई।"

"यदि स्वीकार करते हो तो उसे अपने संघ में किस लिए रख लिया ?"

"तुमने मुझे समझा नहीं कन्हाई। अब तक समझ लेना था। अग्नि से जो भय खाता है वह अग्नि का उपयोग नहीं कर सकता। मैं अपने कार्य में से अग्नि को अलग नहीं रख सकता। हमारे संघ के लिए इला अग्नि के समान ही है, मैं उसका उपयोग करना चाहता हूं।"

"और यदि इससे काम में बिगाड़ आ जाए को क्या होगा ?"

इन्द्रनाथ ने कोई उत्तर नहीं दिया तो कन्हाई फिर कहने लगा—

"अर्थात् कार्य चाहे बने या बिगड़े, तुम्हें इसकी कोई चिन्ता नहीं है। क्यों ठीक है न ?"

गम्भीर हो इन्द्रनाथ बोले—

"ईश्वर स्वयं अग्नि से खेलते रहते हैं। पूर्व से योजना

आदि बना कर कार्य करने से दुनियाँ के कार्य नहीं चल सकते।
फिर बिना योजना आदि बना कर अनिश्चत प्रत्यक्ष के साथ
जो कार्य किये जाते हैं उनका परिणाम अच्छा निकलता है।
हमारे संघ में जो अतीन नामक युवक आया है, उसका आने
का जो कारण है वह इला का ही आकर्षण है। और अतीन के
लिए मेरा आग्रह इस कारण है कि इसके अन्दर 'डायनामाइट'
की सी शक्ति है जिससे विपत्ति के पहाड़ टूक-टूक हो जाँएगे।'

"भइया इन्द्रनाथ!" कन्हाई कहने लगा, "तुम्हारी यह
जो प्रयोगशाला है, हम तो इसके 'बेयर' मात्र हैं। अन्दरूनी
बातों को तुम जानो। लेकिन, हाँ यदि किसी दिन अन्दर की
गैस फट कर अथवा यंत्रों का कोई पुर्जा टूट कर उछटेगा तो
सिर हमारे ही फटेंगे। देश-कार्य में ऐसी चोटें लगना गौरव
की बात होगी, यह मैं मानता हूं परन्तु सिर तुड़वाने के बाद
और वीरता दिखाने योग्य शक्ति हमारे अन्दर नहीं रहेगी।"

"फिर इस कार्य से अवकाश क्यों नहीं ले लेते?" इन्द्र-
नाथ के स्वर में व्यंग की कठोरता आ गई।

कन्हाई ने यह सुन कर उत्तर दिया, "क्या कहने लगे
भइया! इतने समय से इस कार्य में संलग्न हूं—फिर बिना फल
प्राप्त किए कैसे हट सकता हूं? संभव है तुम्हें फल की दरकार
न हो, लेकिन हमको तो है। जो व्यक्ति तुम्हारी दलाली कर
रहे हैं, उनका कहना है कि कदाचित् किसी दिन अमृतफल भी
प्राप्त हो जाय। इसी आशा में हम गरीब लोग हैं। आशा पूर्ण
होने की भी निश्चिन्तता है इसी से मैं भी इस षड़यन्त्र कार्य में
लगा हूं। यदि तुम्हारे इस मायाजाल में मुझे जरा भी अनिश्चि-

तता दिखाई देती तो मैं इसमें फसने वाला जीव नहीं था। तुम इस विद्रोह को एक जूआ समझ रहे हो किन्तु मेरे लिए यह एक व्यापार है। भाई इन्द्रनाथ, आखिर में हेमें हिसाब-किताब के कागज-पत्रों में आग लगा कह हमें धोका न देना ऐसा परिहास हमें सहन नहीं होगा क्यों कि तुम्हारे इस व्यापार के धेले-धेले में हमारा खून लगा हुआ है, समझ गए न ?"

इन्द्रनाथ बोले, "मैं दिलखोल कर यह काम कर रहा हूं, कन्हाई। मेरे मन में कोई अन्धविश्वास नहीं, हार-जीत की बात मैं सोचता ही नहीं। मैं इस बड़े विद्रोह का नेतृत्व कर रहा हूँ मेरा इतना ही कार्य है। इस काम में हार-जीत दोनों में ही गौरव की प्राप्ति होगी। चारों ओर के द्वारों को बन्द कर इस देश के शासन ने हमें लंगड़ा करना चाहा है मौत को पा कर भी मैं उन्हें यह दिखला देना चाहता हूँ कि मैं कितना विशाल हूं! देश की आजादी के लिए मैंने आवाज उठाई है और इस आवाज पर कितने ही श्रेष्ठ से श्रेष्ठ युवक मृत्यु की ओर से निश्चिन्त हो चँहु ओर से दौढ़े आए हैं, यह तुम सब देख ही रहे हो। किन्तु किस लिए ? इसी कारण न कि मेरी पुकार में शक्ति है। मेरी यह पुकार लोगों के कानों तक ही नहीं दिलों तक पहुँच रही है. यह बात भी मैं भलीभाँति जानता हूं इसके बाद मेरा काम खतम हो जाएगा, आगे कुछ भी हो, मुझे इसकी चिन्ता नहीं।"

एक क्षण मौन रह कर कन्हाई की ओर देख कर इन्द्रनाथ फिर कहने लगे—

"तुम अपनी ही बात लो। बाह्य रूप में तुम एक मामूली

से आदमी हो लेकिन तुम्हारे आन्तरिक रूप में जो मुख्य बात छिपी थी उसे मैंने ही प्रगट किया है तुमको इस काम में दिलचस्पी हुई, मन में करने की इच्छा हुई। तुम सभी के साथ मेरी एक यही रसायनिक साधना है, इससे और अधिक मुझे चाहिए ही क्या? किसी भी ऐतिहासिक महाकाव्य की समाप्ति पराजय के विशाल श्मसान में ही होती है। ऐसा होने पर क्या होता है? वह महाकाव्य ही बना रहता है क्या? क्रान्ति के लिए मेरे ये प्रयास विफल हो सकते हैं पर फिर भी इतिहास के पृष्ठों में सदा यह अङ्कित रहेगी ही। दासों के देश में जहाँ इन्सानियत का आदर्श ही लगड़ा लूला बना है, वहाँ इन्सान की भांति मृत्यु को पाना भी एक गौरव पूर्ण बात है।"

"भाई इन्द्रनाथ, तुम तो करते हो बड़ी-बड़ी बातें। मैं एक मामूली आदमी ठहरा। मेरी नजरों में कल्पना को कोई स्थान नहीं। एक भले मानुस को भी तुम अपने पागलपन के ताण्डव नृत्य मे खींच कर नचा रहे हो, यह विचार कर मेरे विस्मय की सीमा नहीं रहती। इस रहस्य का अन्त में अभी तक नहीं जान सका।"

इन्द्रनाथ बोले, "इसमें विस्मय की क्या बात है कन्हाई? मैं पागल की भांति तुमसे निवेदन तो करता नहीं। यही कारण है तुम लोगों पर मेरा अधिकार है। लोभ दिखा कर या धोका देकर मैं किसी को नहीं बुलाता। किसी कठिन कार्य के लिए ही विपत्ति के काल में तुम्हें पुकारता हूं। और वह भी पुरस्कार लेने-देने के विचार से नहीं, वरन् तुम्हारा इम्हान लेने के लिए। मैं निर्लिप्त प्रकृति का हूँ। जो होता है अथया होने वाला है,

उसे मैं बिना किसी हिचक के स्वीकार कर लेता हूं। इतिहास का अध्ययन मैंने किया है। उसमें पाया है कि कितने ही बड़े-बड़े राज्य गौरव की ऊँची चोटी पर पहुँचे हुए थे, लेकिन उनका नाम-निशान आज कतई नहीं मिलता। सब धूल में मिल गए, संसार में उनका निशान तक भी नहीं मिलता।"

कुछ चुप रहे आकर इन्द्रनाथ अपनी बात पर जोर डाल कर कहने लगे, "एक मूर्ख की भाँति मैं यह माँग किसके सम्मुख करूँ कि, हमारा देश हमारा ही है इसी कारण सदा सौभाग्य का दावा करेगा और चन्दन, रोरी लगा कर घण्टे बजा कर हार के सभी कारणों की पूजा करेगा। मैं यह माँग तो कभी नहीं कर सकता। मैं वैज्ञानिक हूं, मेरे दिल में वह बात कतई नहीं...है। जिसकी मृत्यु होती है, वह होगी ही, यह बात मैं चुपचाप स्वीकार करता हूं।"

"तुम्हें करना क्या है भाई?"

"यही कि हमारे देश की दशा कितनी ही बिगड़ी और अवनत क्यों न हो, मेरा यह सिर कभी झुकेगा नहीं? मैं इससे भी कहीं अधिक उच्चावस्था में अपने को पाता हूँ। मौत के सभी लक्षण देखते हुए भी मैं अपनी आत्मा में गिरावट नहीं आने दूँगा।"

"और हमारा क्या होगा?" घबरा कर कन्हाई पूछ उठा।

भृकुटियों को सिकोड़ते हुए इन्द्रनाथ कहने लगे, "तुम्हारा और क्या होना है? तुम लोग बालक तो हो नहीं। समुद्र के मध्य जब जलपोत टूट कर डूबने लगता है तब क्या उसकी रो-रो

कर मन्त्रों का उच्चारण कर भगवान की दुहाई देते हुए रक्षा की जा सकती है ?"

"फिर करना क्या चाहिए ?"

"और क्या करना होगा ? तुममें कितने ही ऐसे हैं जिन्होंने इस भयंकर जलजले के समय टूटे हुए जलपोत पर पाल लगा दी है। तुम्हारे हृदयों में कम्पन नहीं हुआ। जलपोत के डूबते-डूबते जितने भी ऐसे व्यक्ति हमें मिलेंगे, हमारी जीत उतनी ही गौरवपूर्ण होगी। जो देश रूपी जहाज अन्धों की भाँति रसातल की ओर जा रहा है, तुम लोग उसी के मस्तूल पर अन्त समय तक विजय-पताका फहराते रहोगे। तुम्हारे नेत्रों के सामने कोई झूँठी आशा नहीं और न तुम निराश हो कर रोते-धोते हो। जहाज में जब पानी भर गया फिर भी तुम लोगों को पतवार नहीं छोड़नी। पतवार छोड़ना ही कायरता है। तुम जितने भी मेरे साथ में हो, सभी से मेरा काम बनेगा, सभी मेरे काम में आएंगे। उसके पश्चात् क्या होगा, पूछते हो ?" इतना कह कर वे गीता का एक श्लोक सुनाने लगे, "कर्मण्ये वाधिकारस्ते मा फलेषु...।"

कन्हाई 'मा फलेषु' पर ही बीच से बोल उठा, "इतनी देर से तुम जो कह रहे हो लगता है उसमें एक बात कहना भूल गए हो।"

"कौन सी बात कन्हाई ?"

"यह कि तुम्हारे हृदय में क्या क्रोध नहीं है, तुम इतने क्यों हो ?"

"भाई क्रोध किस पर करूँ ?"

"क्यों, अंग्रेजों पर ?"

"तुम भूल रहे हो भइया। मैं कभी अन्याय नहीं करता और न पागलपन ही करूँगा। देश को देवी या माँ-माँ कह कर अश्रु नहीं बहाता। केवल देश के लिए कार्य ही करता रहूंगा और यही मेरी शक्ति का रहस्य है।"

कन्हाई बोला, "किन्तु इन्द्रनाथ, यदि तुम दुश्मन को दुश्मन नहीं समझोगे तो उस पर हाथ कैसे उठा पाओगे ?"

"जिस प्रकार मार्ग में पड़े किसी पत्थर से बिना गुस्सा किए हाथ लगाता हूँ उसी प्रकार दुश्मन के सामने भी शान्त और स्थिर बुद्धि से शस्त्र चलाऊँगा। दुश्मन भला है अथवा बुरा, यह बात वाद-विवाद—के लिए नहीं हैं। वास्तविकता यह है कि यह शाषन विदेशियों का है। और क्यों कि इस शासन के होने से हमारी आत्मिक शक्ति क्षीण हो रही है, इसी से मैं इस दशा को परिवर्तित करना चाहता हूं। और ऐसा करने से मेरी इन्सनियत ही सिद्ध होगी।"

"अपना लक्ष्य प्राप्त होगा या नहीं, इसकी तुम्हें कोई चिन्ता नहीं, क्या तुम्हें इस विषय में कोई निश्चित आशा भी है ?" कन्हाई ने पूछा।

"आशा की निश्चिन्तता भले ही न हो, मैं अपनी आत्मा को अपमानित नहीं होने दूँगा। पराजय की पूर्ति सम्भावना है इसी से हिम्मत के साथ, पराजय की ओर ध्यान न दे कर अपने को मर्यादित रखना होगा। मेरे ख्याल से यही हम लोगों का आखिर तक फर्ज रहेगा भले ही हमारा लक्ष्य हमें न मिले, लेकिन हमारा आत्मसम्मान बना रहना ही चहिए।"

: २ :

अपने कमरे में इला आराम कुर्सी पर बैठी थी। पीठ की ओर तकिया लगा था। वह तन्मय हो कुछ लिखने में व्यस्त थी। पाँव के ऊपर पाँव चढ़ा हुआ था। लकड़ी के एक बोर्ड पर लगा देशबन्धु चितरंजनदास का चित्र उसकी गोद में तिरछा रखा हुआ था।

साँयकाल होने में देर न थी, लेकिन अभी तक इला को चोटी करने का समय नहीं मिल सका था। बाल पीठ पर बिखरे हुए थे। वह बैंगनी रंग की खादी की साड़ी पहने थी। हाथों में शंख की लाल रंग की चूड़ियाँ और गले में सोने का हार पहने हुए थी। हाथी दाँत की तरह उज्ज्वल छरहरा शरीर। देखने में आयु बहुत कम ही लगती थी, किन्तु चेहरे पर पर्य्याप्त गम्भीरता थी। कमरे के एक कोने में लोहे की चारपाई दीवाल से लगी पड़ी थी। उस पर ः रे रंग के खद्दर की चादर बिछी थी।

कमरे में जब धीरे-धीरे अन्धकार बढ़ता गया और दीपक जलाने का समय होने लगा तो इला उठी। वह दीपक जलाना ही चाहती थी कि तभी

द्वार का पर्दा हटा कर एक तेज़ हवा के झोंके की तरह अतीन्द्र कमरे में आ घुसा। आते ही उसने पुकारा—

"इला !"

इला प्रसन्नता से झूम उठी। लेकिन वह प्रसन्नता को छिपा कर अपनी भृकुटियाँ चढ़ाती हुई कहने लगी, "यह क्या बदतमीजी है ? बिना आज्ञा लिए मेरे कमरे में क्यों आ घुसे ?"

अतीन्द्र तुरन्त ही इला के पैरों के पास जमीन पर बैठते हुए बोला, "इन सब झंझटों के लिए समय ही कहाँ है ? जब सतयुग था, यह सम्भव भी था। अब ऐसा करता ही कौन है ? आज कलियुग में समय के साथ हर बात के लिए खींच-तान करनी पड़ती है।"

हँसदी इला। बोली, "मैंने तो अभी वस्त्रों को भी नहीं बदला।"

अतीन भी हँस कर बोला, "यह तो और भी अच्छी बात रही। मेरे वस्त्रों के साथ तुम्हारे वस्त्रों का मिलान हो जायेगा। नहीं तो तुम रहती स्वच्छ और मैं गन्दा। अर्थात् तुम चलती रथ पर मैं होता पैदल यात्री। महात्मा मनु के अनुसार यह एक बड़ा अत्याचार होता। किसी समय मैं बन-ठन पूरा 'जन्टिलमैन' ही बना रहता था। लेकिन आज तुमने ही मेरा वह बनाव-शृङ्गार मुझसे दूर कर दिया। अब देखो, मेरी यह वेश-भूषा कैसी है ?"

अधरों पर ही हँसी बिखेरती इला बोली, "कुर्ते पर सामने की ओर जो टेढ़ा-मेढ़ा फटने का निशान है, क्या तुम्हारे

अपने हाथों का सिलाई का नमूना है ? मुझको क्यों नहीं दिया ? मैं ही सीं देती ।"

"तुम को ? "हँसने लगा अतीन।" तुम कर रही हो एक नवीन युग का सृजन और तुम्हें देता पुराना कुर्त्ता ?"

"तो इसे फेंक ही देते ? इसे पहनने की क्या जरूरत थी ?"

"वही जरूरत से, जिससे कोई भलामानस अपनी पत्नी को दूर नहीं करते ।" गम्भीरता से उत्तर दिया अतीन ने ।

'तुम्हारा तात्पर्य ?" भौं सिकोड़ कर पूछा इला ने ।

"तात्पर्य यही है कि एक के अलावा दूसरा कोई और नहीं है, इस कारण ।"

आश्चर्य करती बोली, इला, "क्या कह रहे हो तुम ! तुम्हारे पास इसके अलावा और कोई कुर्ता नहीं है अन्तू ।"

"देखो इला, "बात बढ़ा-चढ़ा कर कहना ठीक नहीं होता, इसलिए मैंने घटा कर ही कहा हैं । कुछ दिन पूर्व श्रीमान् अतीन्द्रनाथ महाशय के पास भाँति-भाँति के अनेक कुर्त्ते थे । उसी समय देश में बाढ़ का प्रकोप हुआ चारों तरफ हा-हा कार उठा हुआ था । कोष इकट्ठा होने लगा और तुमने भी तो एक दिन अपने भाषण में कहा था, "इस रुदन से परिपूर्ण काल में ।" अतीन ने रुक कर इला की ओर कटाक्ष किया, "स्मरण है, यह 'रुदन से परिपूर्ण काल' का विशेषण तुम्हें ?"

मुस्कुराता हुआ आगे बोला, 'तुमने ही तो कहा था कि इस भीषण समय में औरत-मर्दों के पास अपनी शर्म ढकने तक

को कपड़े नहीं हैं। अतः आज जिसके पास जरूरत से अधिक कपड़े हैं, उसे शर्म महसूस होनी चाहिये। तुमने जिस मधुरता से अपने शब्दों को साज-सवांर कर जो कहा था तो मुझे तुम्हारी बात को हँसी में उड़ाने की हिम्मत नहीं हुई लेकिन मन में तुम्हारी बात खूब हँसा। कारण कि मुझे मालूम था कि तुम्हारे बॉक्स में जरूरत से अधिक अनेकों वस्त्र थे। लेकिन सच तो यह है कि औरतों के पास यदि पचास रगों की पचास ब्लाउजें हों तो सब की सब जरूरी हैं। क्यों इला, मेरा कहना ठीक ही न?' हँसते हुए आगे कहता रहा, "बाढ़ के समय में समाज सेविकाओं में जैसे स्पर्धा ही हो गई थी कि कौन कितना चन्दा और कितनी सामिग्री एकत्रित कर सकती है। बस, मैंने अपने वस्त्रों का सारा सन्दूक ही तुम्हारे चरणों में लाकर भेंट कर दिया और यह देख कर उपस्थित दर्शकों ने प्रसन्नता पूर्ण तालियाँ बजानी शुरू करदीं। समझ गईं न अब कि मेरे पास वस्त्र क्यों नहीं हैं।"

स्तब्ध हो इला कहने लगी, "मैं यह थोड़े ही जानती थी कि तुम ऐसा कर डालोगे। आखिर पहनने के लिए भी तो कुछ छोड़ देना चाहिए था?"

"पश्चाताप न करो इला! तुम्हीं ने तो मुझे इतनी बड़ी हानि सहन करने की शक्ति दी है। अन्य कोई माँगता तो मैं क्या सारा का सारा सन्दूक दे देता? कदापि नहीं।"

लजाती हुई इला बोली, "छिः छिः अनीत तुमने ऐसा किया ही क्यों? मुझे बताया क्यों नहीं? खैर छोड़ो! चलो अतीन, बैठक में अन्दर बैठें चलकर।"

"क्यों यहाँ बैठने को स्थान नहीं है क्या ? मैं अकेला ही तो हूँ। कोई बड़ी मीटिंग भी नहीं होने वाली यहां जो स्थान की कमी पड़ जाय।"

इला बोली, "कोई आवश्यक बात हो तो सुनाओ।"

अतीन कहने लगे, "देखो इला मुझे किसी कविता का एक पद याद आ रहा है...पर मैंने इसे पढ़ा ही कहां ? सुबह से उसे हवा में टटोल-टटोल कर देख रहा हूँ, फिर तुम से ही पूछने चला आया।

"तुम्हारी आवश्यक बात भी यही है ?" इला हँसने लगी, "अच्छा बताओ तो वह कौनसा पद है ?"

"अभी बताता हूँ। सोच कर तुम बताना कि यह किसका बनाया हुआ पद है—

'देखा था मैंने सर्वनाश अपना तुम्हारे नेत्रों में।' यह किसकी पंक्ति हैं ?"

"मालूम नहीं।" इला ने उत्तर दिया, "किसी ख्याति-प्राप्त कवि की तो मालूम नहीं पड़ती।"

"पहले कभी सुनी है ?" अतीन ने पूछा।

"हाँ मालूम ऐसा हो रहा है ! दूसरी पंक्ति किस तरह है ?" इला ने उत्तर दिया।

"मैं तो समझ रहा था कि दूसरी पंक्ति तुम्हें स्वयं ही स्मरण हो जाएगी"

"स्मरण क्यों न आएगा ! लेकिन एक बार तुम्हारे मुँह से भी तो सुन लूँ...।"

"तो सुनो—चैत की रंगीन शाम के उन अन्तिम क्षणों में, देखा था सर्वनाश अपना तुम्हारे नेत्रों में।

अतीन के सिर पर धीमे से चपत लगाते हुए इला कहने लगी, "आज कल यह पागलपन भी सवार हो गया ?"

"आज शुरू हुआ ? नहीं तो ! चैत के महिने में उस दिन शाम को जब तुम्हें देखा था, उसी समय से मुझ पर यह पागलपन सवार हो गया था। समाप्त होने से पूर्व ही जो दिन समाप्त होता है, उसकी याद खयालों की दुनियाँ में भ्रमण करती रहती है। खयालों की दुनियां में तुम्हारा-मेरा साथ हुआ था। और आज भी तुम्हें मैं उसी दुनियाँ में लेजाना चाहता हूं। इसके अतिरिक्त तुम्हें और कोई काम नहीं करने दूंगा।"

लकड़ी का तख्ता और कॉपी को मेज पर पटकती हुई इला कह उठी, "रहने दो काम को।" फिर उठने का प्रयत्न करते हुए बोली, 'दीपक तो जला ही लूं।'

"नहीं इसे भी रहने दो। दीपक के कारण नेत्रों के सम्मुख सभी वस्तुएँ स्पष्ट हो जाती हैं। अन्धकार में चलो हम दोनों उस स्वप्न-संसार में चलें जहां आंखों की देखी कोई वस्तु नहीं होती।"

अतीन अपने मन की गम्भीरता में डूब गया कुछ समय मौन रहे आकर फिर कहने लगा—

"चार वर्ष से कम ही हुए होंगे जब स्टीमर पर तुम्हारा मुझसे प्रथम परिचय हुआ था। उस वक्त मुझे मोकामघाट जाना था और उन दिनों में स्थिति ठीक थी। हालांकि मैं उस समय कर्ज के बोझ से दबा था, फिर भी कुछ पैतृक सम्पत्ति मैंने

अपने अधिकार में रख छोड़ी थी। उस वक्त मैं पूरा दिवालिया नहीं कहा जा सकता था। मेरे तन-मन दोनो सूर्यास्त के समय के बादल की तरह फैशन की लाली में रंगे हुए थे। उस दिन भी मैं सिलक का कुर्त्ता पहने था और सिलक की चादर मेरे कन्धे पर पड़ी थी।

"अकेला ही प्रथम श्रेणी की डेक पर वेतकी आराम कुर्सी पर बैठा था। पटके हुए समाचार-पत्र के पृष्ठ हवा से इधर-उधर उड़े जा रहे थे। मुझे यह सब देखने में भला लग रहा था। प्रतीत होता था जैसे दुनियाँ की सभी खबरें इकट्ठी होकर गोरख धन्धे में फँसा कर सबको नाच नचा रही हैं।" मुस्काते हुए अतीन ने इला की ओर देखा।

दोनों की आँखें एक-दूसरे की ओर देखने लगीं। अतीन आगे कहता गया—

"तुम लोगों की भीड़ के मध्य कमर कसे डेक पर चढने को तैयार थीं। सहसा ही, मुझे नहीं पता कब तुम मेरे पीछे आकर खड़ी हो गईं। आज भी नेत्रों के सामने तुम्हारी वह मूरत घूमती रहती है। आँचल को सिर पर जूड़े की पिन के साथ लगा लिया गया था। मन में भले ही तुम्हारे संकोच रहा हो, किन्तु तुमने जैसे बहाना करते हुए निःसकोच हो मुझसे पूछा," आप खादी क्यों नहीं पहनते ?...'याद है न इला'

"बड़ी अच्छी तरह।" इला मुस्कराती हुई कहने लगी, तुम्हारे हृदय में जो चित्र है, तुम उससे मेरी बार्ता करा सकते हो ? मेरा वह चित्र ही गूँगा है।"

अतीन बोला, "उस दिन जो कुछ भी घटित हुआ आज उसे केवल दुहराना है, तुम केवल सुनता ही रहो।"

"हाँ, सुनूँगी क्यों नहीं ? उस दिन जहाँ मेरा नवजीवन प्रारंभ हुआ, मेरा मन बार-बार वही लौटने को करता है।"

स्वप्न की सी अवस्था में अतीन बोला, "तुम्हारा स्वर सुनकर मेरा सर्वाङ्ग चौंक उठा। वह मेरे मन मे सहसा ही एक ज्योति-किरण की भाँति आ पहुँचा। प्रतीत हुआ जैसे आकाश से आकर एक अनोखी सुन्दर पक्षी मेरा भूत, भविष्य और वर्तमान––सब झपट ले गया, यदि उस दिन क्रोध करके मैं तुमसे अलग हो जाता तो मेरी हालत ऐसी कदापि नहीं होती। उस दिन का सफर मुझे इस झंझट में फसा पाता। उस दिन मेरा हृदय भीगी दियासलाई की तरह था, इसी से क्रोधाग्नि के कारण अग्नि न उत्पन्न हो सकी थी। मेरी प्रकृति में घमण्ड सबसे पहली चीज है। इसी से सोचा कि यह युवती मेरे प्रति आकर्षित हुई है, इसी से मुझसे निःसंकोच हो बातें की हैं। खादी पहनने की बात तो केवल बहाना मात्र था। क्यों यह बात सत्य है क्या ? बताओ न ?"

इला मुस्काते हुए बोली, "कितनी ही दफा कहा जा चुका है कि यह बात सच है। उस दिन डेक पर एक कोने में बैठी बड़ी देर से तुमको देखती रही। मुझे इस बात का आभास नहीं था कि कोई इस बात को ध्यान से देख रहा था अथवा नहीं। जिन्दगी में वही घड़ी मेरी सबसे प्रमुख और अनोखी रही है, एक पत्र को तम्हें देख कर ही मुझे लगा कि तुम्हारे साथ सदा के लिए मेरी जान-पहिचान हो गई। उसी समय मैंने भी मन में दृढ़ निश्चय कर लिया कि इस दुष्प्राप्य मनुष्य को अपने

दिल में लाना ही होगा। केवल अपने समीप और अपने कामके लिए ही नहीं, वरन् अपने संघ के लिए।"

मुँह बिगाड़ कर अतीन बोला, "मेरा दुर्भाग्य है कि तुम्हारा प्रेम सबके नीचे दब गया है।"

गम्भीर होकर इला बोली, इसके अतिरिक्त मेरे पास कोई दूसरा उपाय नहीं था। अन्तू ! द्रोपदी को देखने से पूर्व ही कुन्ती ने कह दिया था "तुम सब भाई मिल कर इसे बाँट लेना।' मेरी भी ठीक वही स्थिति है। तुमको देखने से पूर्व ही अविवाहित रह कर अपने आपको देश के काम में सोंप चुकी हूं। प्रतिज्ञा कर चुकी हूं कि अपने लिए कुछ भी न रखूँगी। अब मैं क्या करूँ देश माता के आगे मैं प्रण कर चुकी हूँ।"

झुंझलाते अतीन कहने लगा, "लेकिन इला, ऐसी प्रतिज्ञा करना तुम्हारे लिए अत्याचार था और अब उस प्रतिज्ञा का पालन करना भी मेरे लिए अपनी प्रकृति के विरुद्ध विरोध करना है। अब प्रतिज्ञा भंग होने पर ही सत्य की रक्षा हो पाएगी। जो प्रेम पवित्र है, अन्तर हृदयों को जानने वाले स्वयं भगवान का आदेश जिस प्रेम के लिए उसे ही तुम अपने पैरों के नीचे कुचल रही हो, इसका दण्ड तुम्हें अवश्य मिलेगा।"

"दण्ड क्या कम मिल रहा है ? दिन-रात भोग तो रही हूं। जिस वरदान की मुझे कल्पना भी नहीं थी, वह मुझे मिल सकता था, लेकिन मैं उसे माँग न सकी। तुम्हारे और मेरे मन के बीच मिलन की ग्रन्थि तो बंध गई है लेकिन फिर भी मेरी विधदशा एक वा की तरह दयनीय है। ऐसी दशा मेरे अतिरिक्त

ग्रौर किसकी है, यह बताग्रो। मैं जादू-मन्त्र से बनी चाहर दीवारी में हूँ,फिर भी तुम्हें देखते ही मेरे व्याकुलहृदय में पुकार होने लगती है—"तोड़ों इन दीवारों को।' इसके पूर्व मैं यह भी विचार न कर पाई थी कि मेरे ललाट में यह भी लिखा है। एक ग्रोर तुम ग्रौर तुम्हारा ग्राकर्षण है ग्रौर दूसरी ग्रोर है मेरी प्रतिज्ञा ग्रौर मेरा देश। दोनों के मध्य संघर्ष करते-करते मैं थक चुकी हूँ।" कहते हुए इला की ग्रावाज करुण हो गई। एक क्षण कुछ सोचने के बाद, वह फिर कहने लगी—

"तुम से साक्षात् होने से पूर्व मेरा दिल कभी चलायमान नहीं हुग्रा था, ऐसी मिथ्या बात मैं कह नहीं सकूँगी। उस समय मैं ग्रपने मन को सरलता से काबू कर लेती थी, दुर्बलता पर विजय प्राप्त कर लेती थी। ग्राज मन को काबू करने या विजय पाने की इच्छा नहीं होती। ऐसा करने पर गर्वान्वित नहीं हो सकूँगी। बाह्य बातों को छोड़ कर, मेरे ग्रन्तर को देखो मैं एकदम पराजित हो चुकी हूं। तुम वीर हो मुझे तुमने जीता है। मैं तुम्हारी वन्दना करने वाली हूँ—तुम्हारे प्रेम के सामने मैं हार कर तुम्हारी हो गई हूँ।"

इस पर ग्रतीन ने बड़े प्रेम से इला का हाथ ग्रपने हाथ में लेकर कहाँ, "तुम्हारी प्रीति में मैं भी तुम्हारा हो गया हूँ। इस जय-पराजय का कोई ग्रन्त नहीं है—हर क्षण मैं पराजित होता जा रहा हूं।"

ग्रतीन की बातों को ग्रपने हृदय-गम्भीरता से ग्रनुभव करती इला कहने लगी—

"स्टीमर को प्रथम श्रेणी के डेक पर जब मैंने तुम्हें दूर से देखा तो मैं सोचने लगी कि तृतीय श्रेणी की टिकिट लेकर यात्रा करना ही गौरव की बात है। हमारे इस आन्दोलन में तृतीय श्रेणी का सफर और खादी का पहनना ही कुलीनता का द्योतक है। स्टीमर से उतरने के उपरांत तुम रेलगाड़ी की द्वितीय श्रेणी में बैठे। मेरा मन भी उसी कम्पार्टमेंट में बैठने को व्याकुल हो उठा। मैंने सोचा कि कोई बहाना क्यों न करूँ। गाड़ी छूटने से पहले तुम्हारे डिब्बे में चढ़ जाऊँ और स्पष्टीकरण यह दूँ कि शीघ्रता में भूल हो गई। यदि चढ़ भी जाती तो कोई हानि तो थी नहीं। कवियों की कविताओं में तो यही कहा गया है कि नारी ही अभिसार किया करती हैं। दुनियाँ में नारी को ही विपत्तियों का सामना करना पड़ता है और इसीलिये कवियों की नारी पर विशेष कृपा है। नारी की सभी चाहनाएँ मन की अन्धकारपूर्ण कोठरी में अन्दर ही अन्दर दीवालों से टकराती रहती हैं। और इन सब बातों को नारी स्वीकार नहीं करती। तुमने इन्हीं गुप्त रहस्यों को मुझसे स्वीकार कराया है।"

"तुमने स्वीकार क्यों किया इला?"

"अपने अहंकार को तोड़कर मैं केवल इतना ही दे पाई। अपने दिल की बातें तो कह डाली है और मैं कुछ नहीं दे सकी हूं।"

अतीन ने इला का हाथ जोर से दबा दिया। बोला, "क्यों नहीं दे सकीं इला? मुझे अपनाने में तुम्हारे सामने कौन बाधक है समाज या जाति?"

इला व्याकुल होकर कहने लगी, "नहीं, नहीं अन्तू, तुम

ऐसी बात दिल में न विचारो ! बाह्य बाधा तो कोई नहीं है अन्तू । बाधा है तो अन्तर में ही है ।"

"तो क्या तुम मुझे प्रेम नहीं करती हो ?"

"प्रेम करने न करने का तो कोई प्रश्न ही नहीं है, अन्तू ! जिन हाथों से पहाड़ न ढकेला जा सके, वे दुर्बल हैं, यह कहते हुए उसकी निन्दा नहीं होनी चाहिए। मैंने प्रतिज्ञा ली है कि मैं विवाह नहीं करूंगी । इस प्रतिज्ञा को तोड़ा कैसे जाय ? प्रेम करने पर भी वे मैं तुमसे विवाह नहीं कर पाऊँगी ।" एक क्षण में ही इला गम्भीर हो गई । आगे बोली, "यदि प्रतिज्ञा भी न की होती तो भी तुम्हारे साथ विवाह करना सम्भव न होता ।"

"क्यों इला ? यह सम्भव क्यों न होता ?"

अतीन्द्र की आवाज विद्रोह का पुट लिए हुए थी ।

"मेरे अन्तू !" इला कहने लगी,"क्रोध न करना। मैं तुम्हें प्रेम करती हूँ उसी में झंझट है। मेरे पास है ही क्या ? मैं एकदम कंगाल हूं—तुमको दिया ही क्या जा सकता है ?"

गर्व के साथ मुख सामने उठाता हुआ बोला अतीन, "स्पष्ट क्यों नहीं कहती, इला···।"

बीच से ही इला बोली, "कितनी दफा तो कह चुकी हूं ।"

अतीन झुँझला उठा। कहने लगा, "पुनः एक बार और कहो ! मैं आज ही सब कहना-सुनना समाप्त करना चाहता हूं । भविष्य में फिर न पूछूँगा ।"

इसी समय बाहर से किसी ने पुकारा,"दीदी !"

इला चौंक उठी, पूछा, "कौन है ? अच्छा अखिल ! आओ···हाँ-हाँ, अन्दर आ जाओ न !"

सोलह-सत्रह वर्षीय लड़का अन्दर आ गया। उद्दण्ड और शैतानियत से भरा चेहरा, घुँघराले बाल इधर-उधर बिखरे हुए। साँवला-स्निग्ध रंग और देदीप्यमान दो सुन्दर नेत्र। खाकी रंग की कमीज और उसी रंग का वेस्ट कोट जिसमें बटन नदारत थे, वह पहने हुए था। कोट में से उसकी छाती का हिस्सा दिखलाई देता था। कमीज के दोनों ओर वाली जेबें निरर्थक वस्तुओं से भरी हुई थीं। कोट की ऊपरी जेब में हरिण के सींगों की एक अनोखी छुरी थी। अखिल उससे कभी खेलने के लिए नाव बनाता तो कभी हवाई जहाज का मॉडल।

वह मातृ-पितृविहीन था। इला उसकी दूर की कोई सम्बन्धित थी और इसी से उसकी शैतानियों को सहन करने का काम इला को ही मिला था।

पता नहीं किससे अखिल एक सस्ता-सा बन्दर खरीदकर ले आया। यह बन्दर रसोई-घर में चोर कर्म करने में प्रवीण था। इला का छोटा-सा परिवार इस जीव से परेशान रहता।

कमरे में घुसने पर अखिल ने शीघ्रता से इला के चरण स्पर्श कर प्रणाम किया। इला जान गई कि इस भक्ति-प्रदर्शन के पीछे कोई विशेष बात छिपी है। कारण कि झूठ-मूठ की भक्ति का प्रदर्शन करना अखिल को आदत नहीं।

मुस्कराते हुए इला बोली, "क्यों रे अखिल ! तूने अतीन दादा को तो प्रणाम किया नहीं ?"

अखिल कोई उत्तर न दे अतीन की ओर पीठ करके खड़ा हो गया। इस पर अतीन जोर से हँस दिया, फिर अखिल को पीठ पर थपकी मारते हुए बोला, "शाबाश अखिल ! यदि सिर झुकाना तो केवल एक ही देवी के समक्ष—उस देवी के जिसके समक्ष कि मेरा सिर भी झुका हुआ है। प्रसाद के भाग के लिये क्रोध न करना भैया, अभी तो यहाँ बहुत-कुछ शेष है"

इला मुस्करा उठी। अखिल की ओर देख कर बोली, "क्या चाहते हो अखिल ? बोलो न ?'

"कल मेरी मां की निर्वाण-तिथि है।"

"उफ ! मैं तो यह भूल ही गई थी। क्या किसी को निमन्त्रित भी किया है ? या निमन्त्रण देना चाहते हो ?"

"किसी को भी नहीं।"

"फिर क्या इच्छा है ?"

"पढ़ाई से तीन दिन का अवकाश चाहता हूँ।"

"अवकाश लेकर क्या करोगे ?"

"खरगोशों के लिये पिंजड़ा तैयार करूँगा।"

"तुम्हारे पास तो एक भी खरगोश नहीं, किसके लिए पिंजड़ा तैयार करोगे ?"

अतीन हँस दिया। कहने लगा, "समझ क्यों नहीं रहीं, इला ! खरगोशों के लिए तो केवल कल्पना की बात है। पिंजड़ा तैयार करना है, असल बात तो यह है। इस दुनियाँ में आदमी हमेशा के लिए नहीं आता। आकर दो दिन बाद फिर चला जाता है। किन्तु पिंजड़ा बनाने का काम स्वयं भगवान् मनु से

लेकर मनु के आधुनिकतम अवतारों तक सभी ने ले रखा है। इसी कार्य में मनुष्य की प्रमुख चेष्टा है।'

अखिल को विदा करने के बाद अतीन पुनः बोला "इस बात को रहने दो इला! अब पुरानी बात पर लौट चलो। और बतलाओ कि तुमने मुझे अपने पास से क्यों दूर कर रखा है?"

"इला तुम मेरी बातों को समझ नहीं पाती। यों कहूं तुम समझना चाहती भी नहीं। अपने दल के लिए तुमने जो प्रतिज्ञा की है, वह भगवान के नियम के विरुद्ध है। इसीलिए तुम तरह-तरह की बातें करके मुझे भुलावा दे रही हो और स्वयं को भुलावे में डाल रही हो। ऐसा तुम भले ही किए जाओ, किन्तु यह बात न कह बैठना कि मेरे जीवन में जो आने वाला है, वह अभी बहुत दूर है।" मेरी जिन्दगी में जिसको आना था वह तुम आ गई हो इला। मैं तुमको ही चहाता हूं। क्या मुझे आश्वस्त करोगी इला कि तुम भी मुझे चाहती हो?"

इला व्याकुल हो कहने लगी, "अनेकों बार कह चुकी हूँ कि मैं तुम्हें ही चाहती हूं तुम्हारी ही मुझे कामना है। संसार की किसी भी वस्तु की मुझे तुम्हारे आगे चाह नहीं है लेकिन तुम्हें मेरे कथन का विश्वास है कहाँ अतीन? सच तो यह है कि जब साक्षात् होने पर नेत्रों का मिलन सार्थक हो उठता है. ऐसी शुभ घड़ी में हमारा-तुम्हारा मिलन नहीं हुआ था। परन्तु फिर भी मुझे कहना यह है कि ऐसा यदि नहीं हो सका है तो भी ठीक ही हुआ है।"

"क्यो?' अतीन ने पूछा "यदि ऐसा हो जाता तो क्या हानि थी?'

क्षण भर को इला सोच कर बोली, "ऐसा होने पर मेरी जिन्दगी निरर्थक न होती, इसमें तो कोई सन्देह नहीं। परन्तु सार्थक हो जाने पर इसका मूल्य कितना था। तुम्हारी बराबरी किसी से नहीं हो:सकती, तुम महान् हो। तुम्हारे स्वरूप को मैंने दूर से भी भली प्रकार देख लिया था। तुम्हारा असाधारण व्यक्तित्व मेरे सम्मुख स्पष्ट रूप से आ गया। इसी से ऐसे महान् असाधारण व्यक्तित्व को अपनी तुच्छता की जंजीरों से जकड़ने के विचार से भयभीत हो उठती हूँ। मेरी इन अधमताओं के मध्य तुम कैसे रह सकोगे? मैं तुमको यह कैसे बतलाऊं कि तुम कितने महान् हो और मुझे तुम्हें देखने के लिए कितना ऊँचा मुँह उठाना पड़ता है।"

इला ही आगे कहती रही, "नारी के आकर्षण से जो लोग 'जीव-विज्ञान' के निम्न और कुत्सित स्तर पर आ जाते हैं, चेहरे के साथ-साथ उनकी प्रकृति भी बदल जाती है। मैं यहबात किसी एक नारी के विषय में नहीं कह रही हूं। कोई प्रयोजन हो या न हो, कोई इच्छा हो या न हो, फिर भी हम नारियाँ पुरुष को पतन की ओर ले जाने का संगठित होकर प्रयत्न करती हैं। सजावट, वस्त्राभूषण और हाव-भाव तथा बनावटी बातों में भी हम सभी एक सी हैं।"

"यह क्यों?" अतीन ने पूछा," क्या हम जैसे मूर्खों को धोखे में डालने के लिए?'

हँसने लगी, इला। बोली, "हाँ, तुम सभी लोग इस सरलता से धोखा खाते हो कि हम नारियों को इस बात का अहंकार होने लगता है। 'इन मूर्खों को हम प्रेम भी करती हैं

और इनकी मूर्खता के शिखर पर चढ़ कर ही हम सूर्य का उदय होना देखती हैं। यह लोग हमारी जिन्दगी को रोशनी से भरते हैं और हम इनकी पूजा करती हैं। मैंने ऐसे भी अनेक लोग, देखे हैं जो अधम, घिनोने और दूसरों की बुराई करने वाले होते हैं जो गरीब और कुरूप भी हैं; लेकिन इन कमियों को अलग हटा कर जो लोग बचे हुए हैं उनकी तादाद भी कम नहीं है। शेष लोगों को मैंने प्रकाश अधिक तीव्र करके देखा तो वे सुन्दर नहीं प्रतीत हुए। उनमें से अनेकों के तो नाम भी स्मरण न रहेंगे, फिर भी महान् कहे जाएँगे।"

"तुम्हारी बातें सुन कर मुझे शर्म-सी अनुभव हो रही है। ऐसा लग रहा है कि विरोध करने से कुछ भी ठीक नहीं होगा। तुम्हारी बातें सुनने में भली अवश्य लगती हैं परन्तु सत्य कहने में हिचक नहीं करूँगा। मैंने लड़कपन से अपने देश के पुरुषों की जिस कमजोरी को देखा है वह तुमको आज बता देना चाहता हूँ। पुरुष को जहाँ कमजोर देखती हैं वहाँ नारियाँ भी अधम स्वभाव की हो जाती हैं और पुरुष को भी अधम बना डालती हैं। हमारे देश में ऐसा है इला कि किसी महान् कार्य को सम्पन्न करने के लिए पहले नारी जाति को उससे अलग रखने की बात सोच ली जाती है। वे कायर लोग औरतों से भय खाते हैं। कदाचित् इसी कारण कायरों के इस देश में तुमने भी प्रतिज्ञा की है कि तुम विवाह नहीं करोगी ताकि तुम्हारा अपरिपक्व और दुर्बल हृदय कहीं लचक न जाय। जो लोग यथार्थ में पुरुष हैं उनका जीवन नारी की शक्ति प्राप्त करके ही सार्थक हो पाता है, यह कठोर सच है। स्वयं परमात्मा का इस प्रकार का निर्देश हमारी नस-नस में विद्यमान है और

जो इस निर्देश का पालन नहीं करते वे पुरुष कहे जाने लायक नहीं। मेरी इस बात की परीक्षा लेने की जिम्मेदारी तुम्हारे हाथ में थी। तुमने मेरी परीक्षा लेकर यह देखा क्यों नहीं ?"

"तुमसे मैं वाद-विवाद करना चाहती तो कर सकती थी। मैं यह अच्छी तरह जानती हूं कि यह सब तुम दुख के साथ कह रहे हो। मेरी सौगन्ध वाली बात तुम कभी भुला नहीं सकते।"

"नहीं इला, मैं भुला नहीं सकता। तुमने अभी-अभी कहा है न कि पुरुष महानता लिए होते हैं। स्त्रियों के द्वारा ही उनमें लघुता आती है। तुम्हें इस बात का डर है। मैं तो कहता हूँ कि स्त्रियों को बड़ा बनने की भी जरूरत नहीं होती। वे जैसी हैं, उसी तरह ठीक हैं। उसी में परमात्मा ने उन्हें पूर्णता प्रदान की है। अभागा तो पुरुष है, उसमें बिना स्त्री के पूर्णता नहीं। अतः सृष्टि रचैया स्वयं भगवान भी इस बात से शर्मिन्दा है।"

"लेकिन इसमें ईश्वर का भी तो महान उद्देश्य देखा जाता है।"

"ईश्वर का उद्देश्य महान है अथवा नहीं, यह तो कहा नहीं जा सकता। फिर यह उद्देश्य ही सबकुछ नहीं है। सृष्टि के कार्य में कल्पना का भी तो बड़ा काम है, वह भी इस उद्देश्य से किसी बात में कम नहीं। इसी कल्पना की तूलिका के स्पर्श से स्त्रियों के स्वभाव में जादू की माया लग जाती है। संसार रूपी जलवायु में स्त्रियों की साधना में रङ्गीनी आती है। इस रङ्गीनी से, मधुरता से अपने तन-मन और प्राण से 'सत्यं-सुन्दरम्' को बताती हैं। स्त्री ही अपनी शक्ति से ऐसा

कर पाती हैं और किसी के लिए यह काम आसान नहीं।"

इला की ओर लक्ष्य करते हुए मुस्कुरा कर अतीन बोला, "यह तुम्हारे शंख के समान स्निग्ध कण्ठ में जो स्वर्ण-माला दिखाई दे रही है। इसकी शोभा बनाने के लिये तुम्हें पुस्तकों का अध्ययन नहीं करना पड़ा। ऐसी भी अनेकों स्त्रियां हैं जो अपनी जिन्दगी में रूप व रस नहीं देख पातीं। ऐसी अभागिनों को सोने का मोटा गहना पहन कर घर-गृहस्थी में बक-झक करते देखा जाता है अथवा किसी की दासी बन कर आंगन की लिपाई-पुताई करने में व्यस्त देखा जाता है ऐसा ही है उनका जीवन और ऐसी असभ्य स्त्रियों की ही संख्या संसार में अधिक है।"

इला अब तक चुपचाप सुन रही थी। बीच से ही कह उठी, "मैं तो परमात्मा को ही दोष देती हूं कि उन्होंने स्त्रियों में लड़ाई करने के लिए शक्ति क्यों नहीं भरी? अपने बचाव के लिए स्त्रियाँ झूठ-सच और छल-कपट का सहारा क्यों लेना पड़ता है? दुनियाँ का सबसे निकृष्ट कार्य जासूसी करना है, इसमें स्त्रियाँ ही अधिक कुशल हैं। ऐसी बात एक पुस्तक में पढ़ कर मैंने ईश्वर से मन मे कहा कि मुझे स्त्री का जन्म अब न देना। मैंने पुरुष को एक स्त्री की नजरों से ही देखा है, उसकी सभी कमियों को अलग हटा कर उसके सभी गुणों की महानता को ही लक्ष्य किया है।"

कुछ समय इला चुप रह कर फिर कह उठी, "जब देश के विषय में विचार करती हूँ तो मेरी आँखों के सामने स्वर्ण के अंश में युवक नाच उठते हैं। ये युवक ही मेरा देश हैं।

कदाचित ये गलत मार्ग पर चल रहे है, फिर भी इस गलती में भी गौरव और महानता प्रतीत होती है। जब यह विचार आता है कि इनको अपने ही घर में उचित स्थान नहीं मिलता तो मेरा हृदय फट जाता है। मैं उन्हीं युवकों की माँ, बहिन और बेटी हूं, यह विचार आते ही मेरा दिल भर आता है। अँग्रेजी भाषा पढ़ी युवतियाँ अपने को सेविका कहने में झिझक का अनुभव करती हैं। किन्तु मेरा हृदय पूर्ण रूप से यही कहता है कि मैं सेविका हूँ, तुम सभी की सेवा करने में ही मेरे जीवन की सार्थकता है। स्त्रियों का प्रेम अन्त में इसी प्रकार की भक्ति में बदल जाता है।''

अतीन बोला, "ठीक है। भक्ति करने योग्य अनेक अन्य लोग मिल जाँयगे। मुझको ही तुमने अपनी भक्ति का पात्र क्यों चुना? भक्ति के बिना भी मेरा काम चल सकता है। मां, बहिन और पुत्री—नारी के रिश्ते की जो सूची तुमने प्रस्तुत की उसमें एक शब्द तुम्हारे ध्यान से रह गया है।''

इला गम्भीर हो उठी। बोली, "मैं तुमको तुमसे भी अधिक यह पहचानती हूँ अतीन! मेरे प्रेम-पिंजड़े में दो दिन रह कर ही तुम्हारे पर फड़ फड़ाने लगेंगे। तुम व्यग्र हो उठोगे। तुम्हें प्रसन्न करने योग्य मेरे पास जो उपकरण है, वे सभी एक दिन तुम्हारी दृष्टि में तुच्छ हो जांयगे। उस वक्त तुम जान पाओगे कि मैं कितनी दीन हूं। इसी से मैंने तुम पर अपना दावा छोड़ कर समूचे हृदय से तुम्हें देश के हाथों में अर्पित कर दिया। अब तुम पर मेरा कोई अधिकार नहीं रहा, अतीन! देश-कार्य करते समय तुम्हारी शक्ति कम से कम स्थानाभाव के कारण दुखी नहीं होगी। तुम्हारे दिल में देश के साथ मैं

कोई जगह पाने का प्रयत्न न करूँगी ।"

आघात पर आघात हुआ था। अतीन व्याकुल हो छटपटाने लगा। उसने कमरे में एक कोने से दूसरे कोने तक चक्कर लगाया, फिर इला के सामने रुक कर बोला, "तुमको दो-चार कटु वाक्य कहने ही पड़ेंगे । मैं कहता हूँ देश-सेवा अथवा किसी अन्य कार्य में मुझे लगाने वाली तुम कौन हो ? तुम्हारे हाथ में जो अधिकार था, उसे ही तुम्हें पूरा करना चाहिए था। तुम मेरे जीवन को अपनी मधुरता के दान से भर सकती थीं। क्योंकि वह तुम्हारी अपनी वस्तु थी। उसको तुम सेवा का नाम देना चाहो तो सेवा कहो, वरदान कहना है तो वरदान कहो। यदि तुम मुझे गर्वान्वित होने के लिए कहती तो मैं गर्व करता और नत-मस्तक हो अपने द्वार पर बुलातीं तो नत मस्तक हो कर ही आता। मेरे पर तुम चाहे जैसा अधिकार जमा सकती थीं, लेकिन तुमने ऐसा तो किया नहीं और अपने अधिकार को अपने ही हाथों संकीर्णता प्रदान कर दी। नारी की उदारता से जो ऐश्वर्य तुम मुझे दे सकती थीं, तुमने मुझे वह न दे कर मुझे 'देश' दिया है। क्यों, कोई देश को किसी को दे सकता है ? क्या देश भी ऐसी कोई वस्तु है जिसे एक हाथ से दूसरे हाथ को स्थानान्तरित किया जा सके ?"

इस पर इला का चेहरा पीला पड़ गया। घबरा कर वह कह उठी, "तुम कह क्या रहे हो, अतीन ! मेरी समझ में कुछ भी नहीं आया ?"

अतीन ने अपनी आवाज को तेज कर कहा, "मैं यही कहता था कि नारी के चारों ओर जो मधुरिमा फैली है, उसका दायरा देखने में छोटा अवश्य मालूम पड़ता है, लेकिन

उसकी गहराई जो हृदय के अन्दर है, उसकी कोई हद नहीं है। वह कोई पींजड़ा नहीं। 'देश' 'देश' कह कर तुमने जो तुमने मेरे निवास के लिए स्थान बताया है, वह क्या यथार्थ में 'देश' ही है ? वह तो तुम क्रान्ति लाने वालों के संघ का देश है। अन्यान्यों के लिए वह चाहे जो कुछ हो, किन्तु मेरी जैसी प्रकृति के लोगों के लिए तो यह एक पिंजड़े से अधिक नहीं। इस तरह की अन्धी देश-सेवा मेरी प्रकृति में नहीं है। इस कार्य में मेरी शक्ति का विकास न होगा। यही कारण है कि मेरे हृदय में अस्वस्थता और विकार आ गया है। अपनी प्रकृति के विरुद्ध अन्य लोगों की बातें सुनकर मैं पागलपन कर बैठता हूँ। शर्म आती है, लेकिन यहाँ से निकल भागने का मार्ग भी नहीं सूझता। बाहर से तभी द्वार बन्द किये हुए हैं। तुमसे कैसे कहूँ, इला ! अपने मन के साथ संघर्ष करने में पिंजड़े के पक्षी की भाँति मेरे पर भी टूट गए हैं। दोनों पाँवों में भी जंजीर डाल दी गई हैं। क्रान्ति के इस आन्दोलन में योग देने के अतिरिक्त मुझमें देश-सेवा करने की भी शक्ति थी, यह बात तुमने मुझ से विस्मृत क्यों करा दी इला ?"

थके क्षीण स्वर में इला बोली, 'तुमने ही विस्मृत क्यों की अन्तू ?"

अतीन ने उत्तर दिया, "विस्मृत कराने की शक्ति तुम लोगों में अपरिमित है, इला, इसी से ! यदि दूसरी कोई बात होती तो मैं बहुत शर्मिन्दा होता। सहस्रों बार यह मानने को तैयार हूँ कि तुम मुझसे, मुझसे ही विस्मृत करा सकती हो। यदि तुम्हारे कहने पर यदि मैं विस्मृत न भी करता तो अपने पौरुष पर मैं सन्देह कर उठता।"

"यदि ऐसी ही बात है तो मुझे क्यों डाँटा जा रहा है अतीन !"

"कह रहा हूँ, इला ! सुनो, यदि तुम मुझसे विस्मृत कराके अपने समीप, अपने संसार में खींच कर अपने ही अधिकार में कर लेती तो मुझे कुछ शिकायत न होती। वह मेरे लिए स्वर्ग सम होता। किन्तु तुमने यह सब न करके संघ की बातें ही दोहराईं। संघ के अन्य लोग जो कहा करते हैं, तुमने भी वही बात कही। "जिन्दगी में सिर्फ एक ही रास्ता है, और वह है 'फ़र्ज' का रास्ता।' किन्तु यह रास्ता तुम्हीं लोगों का बनाया हुआ है। प्रस्तरों से निर्मित इस राज-मार्ग पर चक्कर लगाते हुए मेरा सिर भी चकराने लगा है।"

"यह राज-मार्ग कैसा, अतीन ?"

'वही मार्ग, जिस पर कि तुम्हारी देश-सेवा की गाड़ी बढ़ रही है। तुम्हारे अगुवा का कथन है, "सभी मिल कर इस मोटे रस्से को कन्धे पर रख कर आँख बन्द किये ही खीचते रहो। बस, इतना ही तुम्हारा कार्य है।" फिर देखने की क्या बात थी ? सहस्त्रों लड़के कमर कस के रस्से को खींचने में लग गए। कितने तो पहिए के नीचे आ-आ कर कुचल गए. कितने ही आजन्म पंगु हो गए लेकिन सभी रस्से को खींचने में लगे रहे। सहसा ही रस्से को विपरीत दिशा में खींचने का आदेश मिला। 'जो आज्ञा' कह कर वे फिर रस्से से बंधी गाड़ी को खींचने लगे। गाड़ी घूम तो गई और दूसरी ओर भी चलने लगी। परन्तु इस विपरीत यात्रा में कोई भी उन लड़कों का विचार भी न करसका जो आहत हुए। जिनकी हड्डियाँ टूटी, उनको

हड्डियांजुड़ न सकीं।चलते-चलते जिनमें लगड़ाहट आई,उनको मार्ग से अलग हटा दिया गया। अपनी ताकत का हर इन्सान को भरोसा होता है, लेकिन इसे प्रारम्भ में ही इस तरह दबा दिया गया कि दल में आए सभी व्यक्ति उसी एक साँचे में ढलने को स्वतः ही राजी हो गए। नेता के संकेत पर सब एक ही प्रकार नाच नाचने लगे। इस पर स्वयं आश्चर्य करते हुए वे लोग कहते, इसी को कहा जाता है शक्ति का नृत्य।' इस नृत्य में मजे की बात तो यह है कि जैसे ही नाचने वाला जरा रस्सी को ढील देता है वैसे ही सहस्त्रों नर्तकों का नृत्य विकृत हो उठता है।"

"परन्तु अन्तू! तुमने तो इनका भेस दण्डहीन कार्य ही देखा है और देख कर यह सोचने लगे हो कि इन सब को कठ-पुतली की भांति नचाया जाता है। लेकिन किया भी क्या जाय? इन सब युवकों के पास अपनी कहलाने वाली बुद्धि है कहाँ। इसी से तो इन्हें शक्तिशाली नेता के आदेश पर उठक-बैठक करनी पड़ती है। इतने बड़े कार्य की जिम्मेदारी यदि एक ही व्यक्ति पर होती है तो कार्य भली प्रकार हो पाता है। इसी से हम लोग मास्टरजी पद सारी जिम्मेदारी छोड़ कर निश्चिन्त हैं। जैसा उनका आदेश होता है, वैसा ही हम कार्य करते हैं, कारण कि हमें उन पर भरोसा है। एक बात और भी है—नृत्य में बिगाड़ तब आता है जब नर्तकों के पांव लड़खड़ाने लगते हैं, जब पांव एक ताल पर नहीं पड़ते। हमारे दल के बहुत से नाचने वालों के पांव पागलों की भांति इधर-उधर पड़ने लगे थे। इसी से तो नचाने की जिम्मेदारी एक व्यक्ति के हाथ में रहनी चाहिये।'

"मैं यह जानता हूँ, इला ! लेकिन तुम को यह भी तो समझ लेना चाहिये कि नाचने वाला इन्सान ही है और वह देर तक कठपुतली बना नहीं नाच सकता।" एक क्षण अतीन रुक कर फिर बोला, "यह मैं स्वीकार किये लेता हूँ कि कठपुतली की भाँति नाचने से प्रकृति सुधर सकती है, इसमें अनेकों अच्छी बातें भी आ सकती हैं। लेकिन इसमें समय लगता है। प्रकृति को दबा कर इन्सान को कठपुतली बना देना सहज है—यह समझ लेना भी भ्रमपूर्ण है। इन्सान को एक ताकतवर अजीब चीज समझना चाहिये। तुमने मुझे यदि एक शक्ति सम्पन्न व्यक्ति ही समझा था तो इस संघ में क्यों सम्मिलित कर लिया, अपने हृदय में ही क्यों न जगह दी।"

उदास हो इला बाहर की ओर नजर लगाए थी। उसके मुखड़े पर हृदय की वेदना की छाया स्पष्ट अंकित थी। वह उदास और शान्त स्वर से बोली, "यदि तुम्हारा विचार ऐसा ही था तो प्रारम्भ में ही मुझे अपमानित कर अलग क्यों न कर दिया। अब मुझे क्यों अपराधी ठहराते हो ?"

भर्राये हुए स्वर में दुखी हो कर अतीन बोला, "यह बात तुमसे मैं अनेकों बार कह चुका हूँ, इला ! मेरा-तुम्हारा मिलन हो जाए, ऐसी मेरी इच्छा थी। और यह बात भी एकदम सीधी-सादी है तुम्हें प्राप्त करने के हेतु मेरा लोभ इतना प्रबल था कि मैं तुम्हें किसी भी प्रकार अपना बना लेना चाहता था। सीधा मार्ग तो अवरुद्ध था, कारण कि तुम देश की सेवा में अपना तन-मन लगा चुकी थी, इसी से मैंने मजबूर होकर टेढ़े रास्ते को अपनाया। मुझे उद्देश्य में सफलता भी प्राप्त हो गई, तुम्हारा मुझ पर मोह हो गया, तुम्हारे नेत्र मेरे पीछे-पीछे

लग गये, लेकिन आखिर में नतीजा कुछ न निकला। मैं तुम्हें प्राप्त करने में असमर्थ ही रहा, इस टेढ़े मार्ग पर चलना भी मेरा निरथक रहा। अब मैं कर ही क्या सकता हूँ, इला।" अतीन के स्वर में असीम वेदना थी।

यह सुन इला की आंखें डबडबा उठीं।

इस ओर ध्यान दिए बिना अतीन आगे कहता ही गया—"तुम को प्राप्त करने के लिए ही मैं इस मार्ग पर आया था, लेकिन तुमको पा नहीं सका। अब इसी मार्ग पर बढ़ते-बढ़ते मुझसे प्राण देने होंगे, कोई अन्य उपाय नहीं है।' इतना कह कर उसने दुख की अग्नि से जलती हुई आंखें इला के चेहरे पर जमा दीं और फिर कठिनाई से आगे कह सका—

'प्राण अवश्य दूंगा! कोई मुझे रोक न पाएगा। मेरी मृत्यु के पश्चात् तुम मुझे अपनी भुजाएं पसार कर मुझे बुलाओगी। अपने रिक्त हृदय में स्थान देने के लिए मुझे बुलाओगी, दिन-रात आकुल हो रुदन करोगी। लेकिन, मैं आउंगा नहीं, आ नहीं सकूंगा।'"

बर्छी के भेदने जैसी अवस्था में हो इला करुण स्वर में बोली, "तुम्हारे पांव गिरती हूँ, अतीन! ऐसी बात मुंह से न निकालो।"

एक क्षुब्ध नाग की तरह फुंकार मारता हुआ अतीन बोला—"क्यों? क्या यह बुरा लग रहा है? क्या मैं मूर्ख की तरह बात कर रहा हूँ? कदाचित् यह तुम्हें एक रोमान्टिक बात मालूम दे रही है। क्यों ऐसा ही है न? लेकिन मैं क्या

करूँ ? हालत ही ऐसे आ बने हैं। यथार्थ-मिलन के तनिक भी चिन्ह नहीं दिखाई देते। इस मिलन में तुम्हें स्पर्श की अनुभूति प्राप्त किए बिना ही तुम्हें सन्तुष्टि प्राप्त करनी होगी। वियोग का दुख जो तुम्हारे सम्मुख उपस्थित होने वाला है—आज का यह निरर्थक मिलन क्या उस दुख की छदाम बराबर कीमत भी नहीं दे सकेगा।

"आज यह सब तुम क्या कहे जाते हो, अतीन ! आँसू पोंछते हुए इला ने पूछा।

अतीन ने उत्तर दिया, "नहीं अतीन ! तुमने मुझे पहचाना नहीं है और न आगे ही पहचान सकोगी। यह उम्मीद मैं करता नहीं, कर भी कैसे सकूँगा। क्या तुमने मुझे अपने इस दल की शतरंज के खेल का कोई मुहरा बना रखा है ? क्यों है ऐसा ही न ? अपनी कोई चाह नहीं, आजादी नहीं—खिलाड़ी जो मन में आए सो करे। मैं तो आँखें मूँदे ही पड़ा हूँ।"

इला कुर्सी से नीचे उतर आई और उसने अतीन के पाँवों में अपना सिर रख दिया। व्याकुल हो उठा अतीन। उसने उसे तुरन्त ही उठा लिया। अपने समीप बिठाते हुए उसने उसकी पीठ पर हाथ फेरा और फिर कहने लगा—

"इस सुन्दर और छरहरे शरीर को मैं मन ही मन वाणी के अलङ्कारों से सदा अलंकृत करता हूं। तुम्हीं तो मेरे शरीर में रक्त का संचार करने वाली लता हो, तुम्हीं मेरा दुख और तुम्हीं मेरा सुख हो। मैं एक अनोखा जीव हूं जिसके चारों ओर एक न दिखाई देने वाला आवरण है। दुनियाँ के लोग मेरे इस

आचरण को अलग कर मेरे निकट नहीं पहुँच पाते। इसी से शेष संसार से अलग हूँ। मास्टरजी को यह बात ज्ञात है—फिर भी मुझ पर उन्हें न जाने क्यों विश्वास है?"

इला कहने लगी, "मेरे विचार में वे इस कारण विश्वास करते हैं कि तुम सब आजाद हो। संसार से तुम्हारा कोई सम्बन्ध नहीं। इस संसार से मेल रखने के लिए ही मुझे संसार में आना पड़ता है। यह सब तुम किसी भी प्रकार सह नहीं सकोगे इसी से तुम पर भरोसा है उन्हें। मास्टरजी को भी तुम पर विश्वास है और मैं भी करती हूं।" यह सब तुम कैसे कर पाओगे? कदाचित् ही किसी नारी ने पुरुष पर इतना भरोसा रखा हो यदि तुम एक मामूली आदमी होते तो मैं एक मामूली औरत की तरह मुझसे भय खाती। परन्तु तुम कोई मामूली व्यक्ति नहीं हो। इसी से तुम्हारे संसर्ग में रह कर निर्भीक बन गया हूं।"

"लेकिन इला, मैं तुम्हें निर्भीक होने के लिए धिक्कारता हूं। यदि तुम्हारे हृदय में जरा भी डर होता तो तुम पुरुष का स्वरूप जान लेतीं। देश के कार्य में तुम साहस का दावा करती हो, यह तो उचित है। तुम्हारी जैसी स्त्री के लिए एकदम संगत है। मैं यह स्वीकार करता हूँ कि मैं भीरु व्यक्ति हूँ। तुम्हारी सहमति के बिना भी मैं तुम्हें कब का अपहरण कर लेजा सकता था। उस समय ऐसा अवसर भी मिला था—फिर भी मैं ऐसा नहीं कर सका। क्यों? बाधा कौन-सी थी? केवल सज्जनता की। लेकिन प्रेम में तो हमेशा बर्बरता होती ही है। यदि मैं बर्बर और असभ्य न होता तो पत्थरों को हटा कर

मार्ग कैसे बना पाता ? प्रेम का झरना एक पागल झरना है। वह शहरी नल का पानी नहीं हो सकता।''

इला शीघ्रता से उठ बैठी, बोली, "चलो अतीन, कमरे में चलो।''

अतीन हँसने लगा। खड़े होते-होते वह बोला, "क्यों यहाँ क्या हुआ ? यहाँ भय लगता है। क्या तुम यहाँ सचमुच ही भय करने लगीं ? फिर तो मैं विजयी ही हुआ। जिस समय प्रथम बार मेरे मन में यौवन ने अपनी रङ्गीन ला कर भरी, उस समय भी मैं स्त्रियों को नहीं पहचानता था। केवल दूर से ही, कल्पना-दृष्टि से ही उन्हें देख पाता था। वह समय भी बीत गया। मैं इस बात को प्रमाणित नहीं कर सका। तुम स्त्रीयाँ मुझे जैसा चाहती हो, मैं वैसा ही हूं। ऊपर से सज्जन लगता हूं पर भीतर से मैं अच्छा नहीं हूँ। मैं असभ्य और उद्धत व्यक्ति हूं। यदि वह समय न निकल गया होता तो मैं इसी समय तुम्हें जबरदस्ती पकड़ लेता। इतनी कठोरता से कि तुम्हारी पसली की एक-एक हड्डी चरचराने लगती। न तो मैं तुम्हें सोचने का अवसर देता और न रोने के लिए तुम्हारे पर दम ही रह पाता। निर्दय की भाँति मैं तुम्हें खींच कर अपने साथ ले जाता। फिर हम दोनों ऐकात्म हो जाते। आज हम ऐसे स्थान पर आ खड़े हुए हैं जहाँ साथ-साथ चल सकने के लिए स्थान नहीं है। यह रास्ता उस्तरे की धार की भाँति संकीर्ण और तेज है।''

इला दोनों हाथों को पसारे अतीन की ओर बढ़ी और आंखें बन्द किए उसके वक्ष पर अपना सिर रख दिया। एक क्षणोपरान्त उसके चेहरे की ओर अपनी दृष्टि उठा कर आकुल-

स्वर में बोली, 'मुझे जोर चला कर छीनना चाहते हो, अतीन ! छीनने का अवसर नहीं आएगा। लो, मैं स्वयं ही तुम्हरे पास आए जाती हूँ। तुम्हारे हाथों में अपने को दिए देती हूँ। लो, मुझे स्वीकार करो। मैं तुम्हारी ही हूँ।"

अतीन ने उत्तर में एक शब्द भी न कहा। सिर्फ एक हाथ बढ़ा कर इला को वक्ष से सटा लिया और दूसरे हाथ को बालों में उलझा कर बड़े प्यार से उनसे खेलने लगा। अतीन से कुछ उत्तर न पा कर इला ने अपना मुख ऊपर उठाया। सहसा उसकी दृष्टि खिड़की के बीच से मार्ग पर जा पहुँची। चौंक उठा इला, बोली, "लो, सर्वनाश हुआ चाहता है वह देखो।"

"क्या है इला, "अतीन ने भी उधर नजर घुमाते हुए पूछा।

"वह देखो, मोड़ पर कौन व्यक्ति है। बटु है न ! अवश्य हो इधर आ रहा है।"

"अपने बैठने-उठने के स्थान को बटु खूब पहचानता है।" अतीन मुस्करा कर बोला।

भ्रकुटियों को टेढ़ी कर इला बोली, "उसको देखते ही मेरा अङ्ग-अङ्ग संकुचित हो उठता है। जितना उसे टालना चाहती हूं, जितना उसे दूर ढकेलती हूं वह उतना ही समीप आने का प्रयत्न करता है। कितना अधम है। तन-मन से कितना नीच है ?" इला ने अपने कथन में अपरिमित घृणा उडेल कर रख दी।

अतीन बोल उठा, "मुझे भी यह सह्य नहीं है।"

इला बोली, "उसके विषय में सोचना भी मेरा अन्याय है, यह विचार कर मैंने अपने को शान्त रखने का बहुत प्रयत्न किया, लेकिन ऐसा कर नहीं सकी। उसकी बड़ी-बड़ी टकटकी लगा कर देखती हुई आँखें मुझे स्पर्श करने को उत्कंठित रहती हैं। दूर से भी वे मेरा अपमान करती हैं।" यह कहते हुए इला उत्तेजित हो गई।

अतीन धीरज बँधाते हुए बोला, "छोड़ो भी इला! उसकी विचार करने की भी जरूरत नहीं। मन को उधर से हटा क्यों नहीं लेतीं?"

"अतीन!" इला कहने लगी, "मैं उससे भय खाती हूँ, इसी से मन हटना सम्भव नहीं। उसका जो आन्तरिक रूप भी मुझे दीखता है, वह कितना भयंकर और घिनौना है। मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि वह किसी दिन मुझे अपमान की शृंखलाओं से जकड़ देगा। मुझे लगता है कि वह इसी षड़यन्त्र में संलग्न है। कदाचित तुम हँसने लगोगे और कहो कि यह मेरा स्त्रियों का स्वभाविक भय है। लेकिन नहीं, तुम्हें यह ज्ञात नहीं कि भय का भूत मेरे ऊपर बुरी तरह रूवार है। यह भय केवल अपने लिए ही नहीं है। मैं समझती हूँ कि वह तुम्हें ईर्ष्या करता है और उसकी यह ईर्ष्या भयंकर रूप से नागिन की तरह फुंकारती अनुभव करती है।"

"तुम चिन्ता मत करो, इला! बटु मेरा कुछ भी न बिगाड़ सकेगा। बटु की तरह के जीवों में हिम्मत क़तई नहीं होती। उनमें से केवल बदबू ही निकलती है। इसी से लोग उसे छेड़ना नहीं चाहते। मुझसे वह अत्यधिक भयभीत रहता

है। यह इसलिए नहीं कि मैं कोई भयानक व्यक्ति हूँ, वरन् इस कारण कि मैं उससे भिन्न व्यक्ति हूँ।"

एक क्षण चुप रहने के बाद अतीन फिर सहज भाव से बोला, "बटु से मुझे कोई भय नहीं, इस समय यदि खतरा है तो दूसरी ओर से है।"

"मैं तुम्हारा मतलब समझी नहीं।"

अतीन के नेत्र क्षणभर के लिये इला की ओर देखने के बाद दूसरी ओर देखने लगे। उसने अस्पष्ट स्वर में कहा, "वह व्यक्ति बटु से भी भयानक है। वह हम दोनों को जला कर भस्म करने को तैयार है। वह बटु जैसा साधारण सिपाही नहीं, स्वयं 'सेनापति उस्मान' है। इस दुनियां में आशा के दो उम्मीदवार नहीं रह सकते। एक न एक की तो मौत होनी ही है। इसलिए जगतसिंह को मरना है।" कहते हुए अतीन मन्द-मन्द मुस्करा दिया।

उसकी यह बात सुन इला विस्मित हो उठी। इन्द्रनाथ भी उसे चाहते हैं, और इसके लिए वे अतीन को अपने रास्ते से हटायेंगे, यह बात उसे बड़ी विचित्र-सी लगी। वह काफी देर तक इसी बात पर विचार करती रही अनेक बातों का अर्थ उसकी समझ में धीरे-धीरे आ गया।

उसको चिन्ता में पड़ा देख अतीन कहने लगा, "छोड़ो भी इस बात को। मैंने तो यह विचार किया था कि मैं इस बारे में तुमसे कभी कुछ न कहूँगा। बटु का प्रसंग छिड़ने पर यह बात आप ही आप मुँह से निकल गई। हां, तुम्हें क्या कहना था?"

इला धीमे-धीमे कहने लगी, "जिन्दगी में अनेक कष्टों और विपदाओं की सम्भावना भी हो सकती है, अतीन ! यह बात मैं पहले भी जानती थी और इसके लिए मैं तैयार भी थी। किसी दिन बटु के पंजे में पड़ूँ, इससे अच्छा तो मृत्यु हो जाय।' कहते हुए इला ने अतीन का हाथ कस कर पकड़ लिया। जैसे वह बटु से अपने को बचाना चाहती हो। आगे फिर कहने लगी—

"तुम्हें ज्ञात है, अतीन ! जब कभी मैं बाघ-भालू जैसे हिंस पशु से अपनी मृत्यु की कल्पना करती हूँ तो उस वक्त परमात्मा से यही विनय करती हूं कि भले ही मुझे बाघ-भालू खा जाय परन्तु घड़ियाल खींच कर कीचड़ में ले जाकर कभी न खाय। ऐसी विपद मुझ पर कभी न टूटे।"

'तो तुमने मुझे बाघ-भालू बना डाला ?"

नहीं,"नहीं।" इला बोली, "बाघ-भालू तुम क्यों होने लगे ! तुम तो मेरे लिए नृसिंह के अवतार की तरह हो। मुझे तुम्हारे हाथों मरने पर मुक्ति प्राप्त होगी। लो, अब सुनो पदचाप ! अब वह ऊपर आ रहा है।"

अतीन कमरे से बाहर निकला। उसने सीढ़ी से उतरते समय जोर से कहा, "ऊपर न आना बटु ! चलो, नीचे की बैठक में बैठें।"

झिझकते हुए बटु कहने लगा, "इला दीदी !"

बीच से बात को काट कर अतीन बोला, "तुम्हारी दीदी कपड़े बदल रही हैं। आओ, नीचे चलें हम।"

"कपड़े बदल रही हैं ? इतनी देर से ? आठ बजकर तीस मिनट हो गए हैं।"

"हां, हाँ, "अतीन बोला, मेरे ही कारण देर हो गई है।'

बटु आग्रह करता बोला, "केवल एक बात कहनी है, मुझे। पांच मिनट से अधिक नहीं लूँगा।"

"अभी-अभी वह स्नानगृह में गई हैं, बटु ! उनका कहना है कि ऊपर के कमरे में कोई आये नहीं। उन्हें यह पसन्द नहीं।"

"आप भी तो गये थे !"

"मेरे लिए ऐसी कोई पाबन्दी नहीं है।" मुस्करा के अतीन बोला।

बटु होठों को विचित्र ढङ्ग से करके मुस्कराया। फिर कहने लगा, "अच्छा, ऐसी बात है। हम सब के लिए पाबन्दी है, लेकिन आपके लिए नहीं। हम लोगों से दीदी का परिचय इतने दिनों का है सो तो कुछ नहीं और आप...। किन्तु स्मरण रखिएगा कि एसे ही परिचय में बाधा आती है। आप का सम्बन्ध देर तक नहीं रह सकेगा।" वक्र दृष्टि से अपने हृदय की सम्पूर्ण ईर्ष्या उँडेल कर बटु एकदम सीढ़ियाँ उतरता चला गया।

इसी समय एक छोटी आरी से खेलता हुआ उधर आ पहुँचा और बोला, "यह आपके लिए चिट्ठी है।"

चिट्ठी के कागज का रंग लाल देख कर ही अतीन को समझने में देर न लगा। 'खतरे की घण्डी' है, शीघ्रता से खोल कर पढ़ने लगा। चिट्ठी में गुप्त भाषा में लिखा था, "इला के

कमरे पर अब तक एक क्षरण भी न रुको। उससे कुछ कहने की भी आवश्यकता नहीं है। तुरन्त इसी समय चले जाओ !"

क्रान्ति के कार्य में सहयोग देने के लिए आज्ञा-पालन के लिए प्रण लिया था। उस प्रण की अपेक्षा करना अतीन को अपने आत्म सम्मान के विरुद्ध लगा। वह चुपचाप इस आदेश को मानने के लिए तैयार हो गया।

नियमानुसार उस पत्र को टुकड़े-टुकड़े कर फेंक दिया गया। एक क्षरण के लिए उसके हृदय में विद्रोह का भाव पैदा हुआ। इला के स्नानागार के द्वार पर एक क्षरण चुप खड़ा रहा, फिर दूसरे ही क्षरण वह तीव्र गति से वहाँ से चल दिया।

मार्ग में पहुँच कर उसने नजर उठा कर इला के कमरे की ओर देखा। खिड़की खुली हुई थी। इला की आरामकुर्सी का एक भाग और उसके साथ ही लाल-पीले रंग के चैक के कपड़े का तकिए का एक कोना भी दिखाई दे गया। अतीन की सतृष्णा दृष्टि एक क्षरण उस ओर लगी रही। एक ठण्डी आह भर कर, वह अपने दिल को थामने का प्रयत्न करने लगा। अपनी पूरी ताकत से उसने उस ओर से अपनी दृष्टि को घुमाया और फिर उछल कर एक चलती हुई ट्राम पर चढ़ गया।

———

: ३ :

गहन वन-प्रान्त छोटे-बड़े रङ्ग-बिरंगे पेड़-पौधों से ठसाठस भरा हुआ था। उनमें कुछ हल्के हरे और कुछ गहरे हरे रङ्ग के थे। कहीं-कहीं पीले-पीले पौधे गहरे भूरे रङ्ग वाले पौधों से आलिंगन बद्ध थे। चारों ओर जैसी नीरवता थी, वैसा ही अन्धेरा छाया हुआ था। बीच में एक तालाब भी था जिसमें पानी के नाम कीचड़ भरी थी। कीचड़ तथा बाँस की सड़ी हुई पत्तियों की बदबू चारों ओर भरी हुई थी।

तालाब के निकट से एक टेढ़ी-मेढ़ी रास्ता दूर तक चला गया था। लेकिन उस रास्ते पर चलना कठिन था, कारण कि बैलगाड़ियों के पहियों से वहाँ की धरती बहुत खराब हो गई थी। इस जङ्गल में, ओल, अरुई, नागफनी और घंटाकरन जैसी वनस्पतियाँ उगी हुई थीं। वृक्षों के बीच से दूर पर धान के हरे-भरे खेत लहलहाते दिखाई पड़ रहे थे। खेतों में पानी भरा हुआ था।

गंगाजी तक जो पगडंडी गई थी, वह अन्त में वहाँ समाप्त होती थी जहाँ छोटी-छोटी ईंटों का बना हुआ प्राचीन घाट टूट कर एक ओर झुक गया था। इस घाट से थोड़े से फासले पर गंगा के तट पर ही

एक प्राचीन जीर्ण-शीर्ण दशा का मकान था। लोगों के कथनानुसार वह मकान भूतों का निवासस्थान बतलाया जाता था।

संघ के प्रमुख की आज्ञा पर अतीन इन दिनों इसी मकान में रह कर अपने को छिपाये हुए था। किसी को भी इस जगह का अता-पता नहीं मालूम था। किन्तु एक शाम को सहसा कन्हाई गुप्ता मकान के अन्धकार पूर्ण दालान में आ खड़ा हुआ। उन्हें देख अतीन चौंक उठा, सोचने लगा कि इनको इस मकान का पता कैसे लगा। फिर विस्मय से पूछा, "आप यहाँ कैसे?"

कन्हाई मुस्कराता हुआ बोला, "बस पूछिए मत, जासूसी करने निकल पड़ा हूँ।"

"आपका यह परिहास समझ नहीं पाया।"

"परिहास नहीं भाई। अभी सब बताए देता हूं। तुम्हें तो ज्ञात हा होगा कि मैं चाय की दुकान करके तुम सब लोगों के खाने-पीने का प्रबन्ध करता था। उस चाय की दूकान पर एक दिन शनि ने भी अपनी कोप दृष्टि डाली तो मुझे दूकान बन्द करके खिसकना ही पड़ा। इतने पर भी पुलिस की दृष्टि से से न बचा। अन्त में कोई युक्ति न सूझने पर मैंने उन्हीं लोगों के रजिस्टर में अपना नाम जासूसों में लिखा लिया। मृत्यु के अतिरिक्त जब कोई उपाय न था तो यह युक्ति ही सूझी। और यह बात है भी बहुत सीधी-साधी।"

"तो आप आजकल चाय का काम छोड़ कर खबर देने का काम करने लगे हैं?"

"और नहीं तो और करता ही क्या ? खबर न देने से भी काम नहीं चलेगा। और सिर्फ खबर भेजता ही नहीं, उनकी खबर भी इधर लाता हूँ। इससे तुम लोगों का लाभ है। अब तो समझ ही गये होंगे कि मैं जासूसी का यह काम क्यों करने लगा हूँ। पुलिस को भी सहयोग और तुम्हारी भी सहायता। अर्थात् इधर चोर से कहता हूं चोरी कर-उधर साह से कहता हूँ जागता रह।"

अतीन के लिये ये सभी बातें अजीब सी लगीं। एक क्षण मौन रहे आकर वह बोला, "इस दफा क्या मेरी बारी है ?"

'बिल्कुल है ही ? यह तो मैं कह नहीं सकता। हाँ, लगभग है, यह कहा जा सकता है। बटु की दृष्टि तुम्हारे ऊपर पूरी तरह लगी है। उसने ही तुमको इस प्रकार फांसा है कि अब बचना कठिन है। शेष कार्य पूरा करने का भार मुझे मिला है। जाँच के लिए जो थोड़ा-सा समय मुझे मिला है, उसी में तुमको निकल भागने का अवसर मिल सकता है। क्या तुम्हें स्मरण है कि गत दिनों में तुम्हारी एक डायरी गुम हो गई थी।

"हाँ, अच्छी तरह याद है।"

"वह अवश्य ही पुलिस के हाथों पड़ जाती। इसीसे मैंने ही उसे चुराया।'

"वह आपने ली ? लेकिन किसलिए ?"

"हाँ, मैंने ही उसे लिया और इसके लिए अब ईश्वर को धन्यवाद देना चाहिए। जिनके मन में सच्चाई होती है, ईश्वर भी उसकी सहायता करते हैं। अब विचार करता हूँ कि कितना अच्छा हुआ जो डायरी मेरे हाथ लगी, अन्य किसी के नहीं।

कैसे भी, यह पूछते हो ? एक दिन जब तुम बैठे-बैठे कुछ लिख रहे थे कि सब मैं ही था जिसने तुम्हें चालाकी से पाँच मिनट के लिए बाहर भेज दिया। तुम उस समय डायरी को वहाँ पड़ा छोड़ गए और मैंने अपने हाथ की सफाई दिखा दी। समझ गए न अब ?"

टकटकी लगा कर अतीन कन्हाई की ओर देखता हुआ बोला, "क्या आपने यह कार्य उचित किया था ?"

"अजी, तुम क्या समझ सकोगे इसकी अच्छाई या बुराई। वक्त आने पर तुम्हें यह मालूम होगा कि 'डायरी' ले कर मैंने कितना अच्छा किया है। साहित्य के नाम पर तुम्हारी डायरी में कुछ नहीं है। न एक नाम और न कोई धाम का अता-पता और न किसी वस्तु का वर्णन ही है। फिर भी उस की हर पंक्ति किसी आन्दोलन के प्रति इतनी घृणा, इतनी अश्रद्धा से भरी हुई है कि कोई राजकर्मचारी वह लिखता तो अंग्रेजी हुकूमत से उसे बड़ा भारी पुरस्कार प्राप्त होता। और हां, यदि बटु तुम्हारे पीछे हाथ धोकर न पड़ता तो तुम उस डायरी के आधार पर बच सकते थे। लेकिन बटु तुम्हारा बड़ा भारी शत्रु है। वह तुम्हें पुलिस के हाथों में पहुँचाए बगैर मानेगा नहीं। इधर इन्द्रनाथ को भी तुम पर सन्देह हो गया है, तुमको अपने मार्ग से हटाए बिना नहीं रहेंगे। अच्छा, यह बताओ ये लोग विशेषत: तुमसे ही क्यों अप्रसन्न हैं ? बता सकते हो क्या ? क्या किसी स्त्री से सम्बन्धित मामला है ?"

अतीन झुंझला कर बोला, "आप यह सब क्या कहे जा रहे हैं ? आपने मेरी डायरी को पूरी तरह पढ़ लिया क्या ?"

"अवश्य पढ़ा है। नहीं तो इतनी सारी बातें ज्ञात हो पाती। तुमसे मुझे पूरी तरह हमदर्दी है अतीन! आन्दोलन के इस गन्दे कीचड़ मे तुम बुरी तरह फसे हुए हो। उफ! तुम्हारे अन्दर ऐसी शक्ति, ऐसी प्रेरणा थी कि तुमसे सचमुच ही देश का भला हो सकता था।"

बात को दूसरी ओर मोड़ देकर अतीन बोला—"क्या तुम्हारे जासूसी के इस कार्य के बारे में दल के सब लोग जानते हैं?"

"नहीं, कोई भी नहीं।"

"मास्टर जी को भी नहीं पता?"

"अतीन तुम्हारे मास्टर जी बड़े विवेकी हैं। उन्होंने कुछ न कुछ तो अनुमान कर लिया होगा। लेकिन उन्होंने मुझसे कुछ भी नहीं पूछा, न कुछ कहा-सुना ही।" कन्हाई कुछ सोच कर फिर बोला, "इन्द्रनाथ का व्यक्तित्व भी विचित्र है। लेकिन सब बेकार ही गया। इतनी शक्ति, ऐसा ऊँचा आदर्श! फिर भी चल रहे हैं गलत मार्ग पर।"

अतीन उसकी बात अनसुनी करते हुए कहा, "आपने यह सारी बातें किसी से नहीं कही, लेकिन मुझे से ही क्यों कही?"

"यही तो अचरज है मुझे। मेरे जैसा शक्की व्यक्ति यदि किसी पर भी भरोसा न कर सका तो जिन्दा कैसे रह सकता है। घुट कर न मर जाय?" कहता हुआ कन्हाई हँसने लगा। फिर बोला, "न तो भावुक हूं और न बेवकूफ ही। मैं डायरी

भी नहीं लिखता। यदि लिखता भी तो तुम्हारे हाथों में देकर हृदय को हल्का कर लेता।''

"मास्टर जी...।'' अतीन कहना चाहता था कि उसकी बात कर कन्हाई बोला, "देखो, तुम्हारे मास्टर जी के पास समाचार पहुँचाना जितना सरल है, हृदय खोलकर बात कहना उतना कठिन है। मैं हूं इन्द्रनाथ का प्रधान मन्त्री, उनका दायां हाथ। लेकिन फिर भी उनकी सारी बातें जानता हूँ, यह कदापि न समझ लेना। बातें उनकी ऐसी-ऐसी रहस्यपूर्ण हैं कि जिनकी कल्पना भी करना कठिन है। मुझे विश्वास है, हमारे संघ के लोग जो व्यक्ति स्वयं ही अलग हो जाया करते हैं, वे इन्द्रनाथ द्वारा बाहर फेंके हुए ही होते हैं। इन्द्रनाथ का यह कार्य भले ही कितना ही निन्दनीय क्यों न हो, लेकिन पाप नहीं कहा जा सकता। मैं यह भी कहे देता हूं कि किसी दिन इन्द्रनाथ की अथवा मेरी सहायता से तुम्हारे हाथों में हथकड़ियाँ पड़ जाँयगी। उस समय तुम बुरा न मान बैठना। यह होगा, अवश्य होगा। संघ में रहते हुए भी संघ में तुम्हें विश्वास नहीं है, इसी से तुम पर सन्देह होना स्वाभाविक है। इन्द्रनाथ अपने कार्य की सफलता के लिए तुम्हें रास्ते से हटाएगा। दूसरी ओर बटु तुससे शुत्रुता ठाने हुए है। वह तुम्हारे खिलाफ इधर इन्द्रनाथ को उकसाता रहता है, उधर पुलिस को भी खबरें देता है। बटु द्वारा ही तुम्हारा यहा का पता जासूस को मिला है। फिर मुझे भी अपना कार्य पूरा करना पड़ा, मुझे भी यहाँ के फोटो खींच कर भेजने पड़े। खैर छोड़ों इन बातों को। अब एक आवश्यक बात सुन लो, ध्यान से सुनने की आवश्यकता है। यह मैं पहले ही बता चुका हूँ कि तुम्हारा जीवन अब खतरे में

है। मैं तुम्हें चौबीस घण्टे का अवसर दिए देता हूं, इस बीच तुम यहाँ से निकल जाओ। इस समय के बाद अगर तुम यहाँ रहे तो तुम्हारा बचना बड़ा कठिन होगा। भुभकी ही तुम्हें पकड़ कर पुलिस में देना होगा। और क्या कहा जाय ? आगे, कदाचित् तुमसे मिलना न हो सके। अच्छा, जाने से पूर्व तुमसे अन्तिम समय मिल लूं।" इतना कह कर कन्हाई बड़े स्नेह से अतीन से गले मिला और फिर वहाँ से बाहर निकल गया।

कन्हाई के चले जाने के उपरान्त अतीन एक जड़ मूर्ति की तरह बैठा रहा। वह अपने मन की गहराई में देखने लगा। मन में सोचने लगा, 'जीवन का अट्ठाईसवाँ साल पार कर क्या उसका अन्त होगा ? उसे स्मरण है कि एक स्वच्छ और सुन्दर प्रभा काल में जब सुनहला प्रकाश फैला हुआ था, उसने अपनी जीवन-यात्रा का प्रारंभ किया था। इस समय से आज वह दूर—बहुत दूर चला आया है। कहाँ ? उसे पता नहीं। इस सफर के प्रारंभ में जितना आनन्द और उत्साह उसे रहा अब उसका लेशमात्र भी भाग नहीं है। जिन्दगी का वह मजबूत और रास्ता साफ अब संकीर्ण और ऊबड़-खाबड़ पगडण्डी में बदल कर एक ऐसे गहन वन में आ पहुँचा है कि आगे बढ़ने की ओर रास्त ही नहीं है। उसे यह सोचकर बहुत विस्मय हुआ कि वह जानते हुए भी क्यों अंजाना और अन्धा बना रहा। विपदाओं से भरे हिंसा के मार्ग पर उसने अपना चरण रखा ही क्यों ? अपना मन, आत्मा और प्रतिज्ञा—सभी को खो कर, सभी का सर्वनाश करके, अतीन को बुद्धि आई क्रान्ति का यह मार्ग उसके उद्देश्य की सिद्धि करान में सफल नहीं होगा। उद्देश्य की सफलता तो दूर की बात रही, संभावना पूर्ण रूप से विफल होने की है। परमात्मा असफल होने पर भी कुछ न

कुछ मूल्य चुकाते हैं, लेकिन जब आत्मा की प्रेरणा ही समाप्त हो जाती है, तब वह किसी प्रकार प्राप्त नहीं हो सकती। गहन दुख के बीच अतीन यही अनुभव कर रहा था कि किस प्रकार से इस गुप्तऔर भयंकर विभीषिकापूर्ण मार्ग पर चल कर उसकी आत्माने अपने को खो दिया है। इस विभीषिका का कोई अर्थ और अन्त हो सकता है क्या ?

दिन की रोशनी मन्द होने लगी। साँयकाल होते होते मकान के उस प्रागंण में झींगुरों का स्वर उठने लगा। समीप ही कोई बैलगाड़ी जा रही थी। उसके चलते हुए पहियों की अजीब आवाज ने उस नीरवता को भंग कर दिया। सहसा ही हवा के एक तेज झोंके की तरह अस्त-व्यस्त स्थिति में इला कमरे में आ पहुँची। उसकी हालत ठीक उस प्रकार थी जिस तरह आत्म-हत्या करने वाला अन्तिम निश्चय कर भाग कर पानी में कूदने चल पड़ता है। उसको वहा पाकर अतीन जैसे ही चौंक कर उछला वैसे ही पागल की तरह इला उसके वक्ष से जा लगी, बोली, "अतीन ! अतीन !! मैं रह नहीं सकी अतीन ! मैं तुम्हारे निकट आ ही गई।"

अतीन व्याकुल हो उठा। उसी समय उसने अपने हाथों को इला से छुड़ाकर उसे अपने सम्मुख बैठा लिया और अश्रु से भीगे चहरे की ओर देखकर बोला, "तुमने यह क्या किया इला ? यहां किस लिए आई ?"

इला ने उत्तर दिया, "मैंने यह क्या किया है, यह मैं नहीं जानती। मैं रह नहीं सकी, अतीन ! किसी तरह तुम्हारे पास आपाई हूँ।"

"यहाँ की बावत तुम्हें मालूम कैसे हुआ ?"

गंभीर नेत्रों को गर्व के साथ उठाकर अतीन की ओर देखती हुई वह बोली, "किसी भी तरह यह मालूम हुआ हो, लेकिन तुमने तो बताया नहीं ?"

अतीन भी गंभीरतापूर्वक बोला, "जिस व्यक्ति ने तुम्हें यहाँ का पता दिया, वह तुम्हारा शुभचिन्तक नहीं। तुम्हें ज्ञात हो इला कि हमारे पीछे घोर षड़यन्त्र रचा जा रहा है। मास्टर जी ने हम पर सन्देह करके हमें अलग फेंक दिया है। अब विश्वास घात का दण्ड मुझे मिलेगा। दूसरी ओर पुलिस भी हमारा पीछा कर रही है।"

झूझला कर इला बोली, "मुझे सब पता है। कन्हाई भाई तुम्हें बचाने के प्रयत्न में भी हैं, यह भी मैं जानती हूँ। मैं ही तुम्हें इस संघ में लाई हूं, इसलिए तुम्हारी रक्षा की जिम्मेदारी मुझ पर ही है। तुम्हारे अज्ञातवास से मुझे पागल ही हो जाना पड़ा उस असह्य अवस्था मैं मुझे यह विचारने का समय नहीं मिला कि कौन मित्र हैं और कौन शत्रु है। कितने ही दिनों से तुम्हें देखा नहीं था—लगता था जैसे पूरा युग हो बीत गया हो।"

अतीन स्तम्भित हो केवल इतना ही कह सका, "तुम धन्य हो ! किन्तु यह पागलपन क्यों किया ?"

धन्य तो तुम हो अतीन ! ज्यों ही मेरे यहां तुम्हारा आना बन्द हुआ, त्यों ही तुम उस आदेश को सिर-माथे ले लापता हो गए !"

"और क्या करता इला ? जितने समय इस दल में रहूंगा, अपने नेता की आज्ञा का भी पालन करना ही होगा, भले ही वह कितनी कठिन ही क्यों न हो। इधर मेरी अपनी भी एक समस्या थी, जो मैं हल नहीं कर पा रहा था। मेरे अन्दर एक बड़ी भारी कमजोरी है। यह कमजोरी एक बड़े अजगर की तरह मुझे लपेटे हुए है और मेरे हाड़ों को पीस रही है। मेरी हड्डी-हड्डी पिस चुकी है, फिर भी मैं इस वन-प्रान्त में छिपा हुआ हूँ।" कुछ समय रुक कर वह फिर कहने लगा, "इला वृटिश-शासन में भूतों के निवास के लिए वन का यही भाग जब से निश्चित किया है, तब से कदाचित ही कोई स्त्री इधर आई हो।"

"नहीं अतीन ! कोई न आई होगी ! और हां, आ भी कौन सकती है ? मेरी तरह किसको गरज होगी जो इस बीहड़ बन में आती।"

"किन्तु इला, आज तुम्हारा यह काम नियम-विरुद्ध है।"

झुंझला पड़ी इला, "रहने भी दो अतीन ! मैं इसकी कोई परवाह नहीं करती। मैंने नियम भंग किया है, यह मैं स्वीकार करती हूँ। मैं मन की कमजोरी को वश में न कर सरदार के आदेश को ठुकरा कर आई हूँ। किन्तु फिर भी मुझे यह कोई खेद का विषय नहीं प्रतीत होता। मैं इसी प्रकार नियम भंग करती रहूंगी केवल अपने लिए ही नहीं, तुम्हारे लिए भी। मैं वहाँ थी और तुम यहाँ लेकिन मेरा मन हर क्षणकहता रहता कि तुम मुझे पुकार रहे हो। मेरे हृदय ने तुम्हारी पुकार को सुना और उत्तर में मैं तुम्हारे निकट

आने को छठपटाने लगी। मैं अपने को रोक न सकी मैं भागी-भागी इधर चली आई। क्या मेरे आने से तुम्हें प्रसन्नता नहीं हुई, मुझे बताओ तो।"

हँसता हुआ बोला अतीन, "इतनी प्रसन्नता हुई है कि वर्णन नहीं कर सकता। अब मैं हर मुसीबत का सामना करने को तैयार हूं।"

"नहीं, अतीन! तुम्हारे सामने कोई मुसीबत नहीं आएगी। जो कुछ भी दुख उठाना होगा, म उठा लूँगी। तुम बेफिक्र रहो...। अतीन, मैं अब जाऊँ?"

"नहीं, कदापि नहीं! अब मैं तुम्हें जाने ही न दूँगा, इला! जो कुछ भी होगा, हम दोनों पर एक साथ ही हो। तुम नियम भंग करके मेरे पास आई हो, मैं नियम भंग करके तुम्हें अपने समीप ही रोके रहूँगा। जो कुछ भी सजा हमको मिलेगी, दोनों आधा-आधा बाँट लेंगे। अब चुप-चाप बैठ जाओ। मेरी बात तो सुनो—एक विचित्र आश्चर्यप्रद सुनहले रङ्ग के दिन जिस समय मैंने प्रथम बार तुम्हें देखा, वह न जाने किस युग की बात हो गई। आज मेरे समीप आओ, फिर एक बार उस घड़ी का स्मरण तो करलें, उसका स्वागत करें। इस जीर्ण-शीर्ण मकान के इस अन्धेरे के बीच फिर उस देवी के दर्शन करना चाहता हूँ। आओ इला, मेरे समीप आओ, आओ।"

"रुको अतीन! इस कमरे को पहले सफाई करके सब वस्तुओं को यथा-स्थान तो रख दूँ।"

आह, इला ! क्या गंजे के सिर पर कंघा करना चाहती हो।"

इला मुस्कराई, बोली नहीं। शान्त दृष्टि से एक बार चारों ओर देख कर रह गई। कमरे के फर्श पर एक केबल पड़ा हुआ था, वहीं एक चटाई बिछी थी। कोने में मिट्टी की ही तश्तरी से ढकी सुराही रखी थी। एक पुरानी सी टूटी टोकरी में कुछ केले रखे थे। कमरे में सील भरी थी और एक प्रकार से दम घोंटने वाली बदबू भाप की तरह कमरे में चारों ओर उठ रही थी।

यदि ऐसा नहीं तो इसी तरह के दूसरे स्थान पहले कभी-कभी इला ने देख रखे थे। बदबू से भरी ऐसी जगह देखकर इला को कभी विस्मित और दुखी न होना पड़ा था। इसके विपरीत उसे इस बात से गर्व ही हुआ था, कि आज हमारे देश के युवक देश के लिए ऐसे दुख भी झेल सकते हैं। मन ही मन ऐसे वीर युवकों के लिए उसका हृदय धन्य-धन्य कह उठा, उसने उन्हें शाबासी ही दी थी। लेकिन आज चारों ओर देखने पर कमरे की जो दशा उसको दिखाई दी, उससे उसके नेत्रों में जल भर आया, गला रुंध गया। आराम के बीच जिन्दगी बिताने वाले युवकों से इला को सदा घृणा रही है—लेकिन आज इस जीर्ण-शीर्ण मकान में गन्दगी और गरीबी के बीच अतीन को पाकर उसके हृदय में हाहाकार होने लगा। उसने अतीन को ऐसे हालतों के बीच पाने का कभी विचार तक न किया था। उसकी आंखों से झर-झर आँसू झरने लगे।

अतीन यह देख कर आकुल हो उठा। लेकिन शीघ्र ही अपने को सावधान कर मुस्कराया। फिर इला के समीप

पहुँच कर उसने उसके आँसू पोंछे। उसका हाथ अपने हाथ में लेकर खेलता हुआ बोला, "यह क्या करती हो इला। यह तो तुम्हें शोभा नहीं देता। चारों तरफ ऐसी शान-शौकत देखकर ही तुम्हें विस्मय होने लगा है। नहीं, ऐसा न करो इला। हमारी शान का थोड़ा-सा ही भाग हमारी नजरों के सामने आ सका है, अभी बहुत सा भाग तो आड़ में छिपा है। न जाने कब और किस घड़ी यहाँ से भागना पड़े, इसी से हम लोग केवल दो-चार साधारण सी वस्तुएँ अपने साथ रखते हैं जिनके लिए आगे दुख न हो। तुम्हें तो हम लोगों की जिन्दगी के हालात मालूम हैं, फिर इतनी दुखी क्यों होती हो इला ?"

इला उत्तर में कुछ कह न सकी। वह मौन हो अश्रु पोंछने लगी।

अतीन ने बात का विषय बदलते हुए कहा, "सच तो यह है इला, कि मुझे यहाँ कोई दुख नहीं उठाना पड़ता। यहाँ से कुछ दूरी पर ही एक जूट मिल की बस्ती है मजदूर लोग मुझे मास्टर कह कर पुकारा करते हैं। मुझसे पत्र पढ़वाते और लिखवाते हैं। उनके लेने-देने का हिसाब, रसीद आदि ठीक है या नहीं, इसकी जांच करा लेते हैं। इसके बदले में वे लोग मुझे देते हैं—तरकारी और फल-फूल। जिसके घर गाय है, वह मुझे दूध भी देता है बस, इला मैं इसी प्रकार मौज से रहता हूँ।"

इला का मन शान्त हो गया था। उसने प्रश्न किया, "यहाँ पर तुम्हारे रहने की और कितनी अवधि है ?"

"अधिक नहीं ! शायद चौबीस घण्टे हो। इस समय के अन्दर ही अन्दर मुझे यहाँ से भागना पड़ेगा।"

"यहां से किधर जाओगे, अतीन ! अपना पता मुझे बताते जाओ।"

"नहीं इला, मैं यह नहीं बता सकता। ऐसी आज्ञा नहीं है।"

"तो क्या मैं पता भी न लगा पाऊँगी ?"

काल्पनिक रूप से पता मालूम करती रहना।" अतीन के धीमे स्वर में कहा, "कल्पना का मान-सरोवर कितना सुन्दर होता है ? ऐसा स्थान दुनियां मे कठिनाई से ही मिलेगा।"

मौन रह कर इला अतीन के थैले में से पुस्तकें निकाल कर देखने लगी। सभी पुस्तकें कविता की थीं। कुछ अंग्रेजी और बंगला भाषा की। इला ने उन्हें ही उलटना-पलटना शुरू कर दिया।

अतीन कहने लगा, "ये पुस्तकें मैं सदा अपने साथ रखता हूं। इस शंका से कि कहीं मैं अपनी आत्मा और उसके स्वरूप को न विस्मृत कर दूं। इन कवियों की दुनियां में मैं एक एक दिन विचरण किया करता था। अब भी तुम्हें पृष्ठ-पृष्ठ पर पेन्सिल से लगे चिह्न मिल जायंगे। ये सभी चिह्न व रेखाएँ मेरी उसी दुनियाँ के रास्ते हैं। वहाँ में एक समय बड़ी मौज से घूमता-फिरता था। लेकिन आज वह समय नहीं रहा...मेरी हालत देखो न।"

अब इला अपने को न रोक पाई। उसने तुरन्त ही अतीन के पांव पकड़ लिए और रोती हुई बोली, "मुझे माफ कर दो अतीन ! मुझे माफ करो ! मेरी ही बजह से आज तुम्हारी यह हालत हुई है।" इला सिसकने लगी।

अतीन ने बड़े प्यार से इलका को उठाया और बोला,'तुम यह क्या करती हो, इला ! इसमें तुम्हारा क्या कसूर है ? जो मैं तुम्हें क्षमा करूँ। यदि भगवान कहीं हैं, और उनकी दया निसीय है तो मुझे वही क्षमा कर सकेंगे ।"

"अतीन। मेरे दुख की कोई सीमा नहीं। जब मैंने तुम को इस मार्ग पर ला पटका था, उस समय मैंने तुम्हें पहिचाना नहीं था ।"

अतीन हँस पड़ा । कहने लगा, "तुम क्या सब दोष अपने सिर पर लोगी, इला। इस रास्ते में आने का कुछ भी श्रेय मुझे न मिलेगा क्या ? जिस प्रमाद के कारण मैं इस ओर बढ़ कर आया, उसका उत्तरदायित्व केवल मुझ पर ही है। मुझ अबोध समझ कर मुझ पर शासन करोगी, यह मुझे सह्य नहीं होगा। इससे उचित तो यही है कि तुम देवी के सिंहासन से नीचे उतर आओ मेरे हाथमें हाथ डाल कर मेरे समीप बैठो। मेरी आँख से आंख मिलाकर मुझसे कहो, "आओ, प्यारे आओ, मेरे आधे आंचल पर आओ, मेरे आधे आंचल पर आकर बैठो ।'

अतीन के इस कथन पर इला को हँसी आ गई। कहने लगी, "और कोई दिन होता तो शायद मैं यह कह भी देती। लेकिन आज नहीं कह सकूँगी। आज तुमने यह क्या पागलपन शुरु कर दिया है ?"

विस्मय से अतीन कहने लगा, "नहीं, पागलपन नहीं करूँगा। क्या कहने लगीं इला ? क्या यह सच है कि तुम ही अपनी मृणाल भुजाओं से मुझे इधर खींच कर ले आई हो।"

"सच नहीं है तो क्या है? सच बोलने पर क्रोध क्यों करते हो?"

अतीन ने हठ किया, "नहीं यह बात कतई सच नहीं। मैं अपनी ही प्रेरणा से ही इधर आया हूं, तुम तो केवल उपलक्ष्य मात्र हो। यदि तुम न होकर तुम्हारी जगह कोई और स्त्री होती तो मैं क्लब में 'ब्रिज' खेलता और घुड़दौड़ के मैदान में लाट-साहब की श्रेणी में पहुँचने का प्रयत्न करता। यदि कोई यह कहे कि मैं बेवकूफ हूं तो मैं गर्व से कहूंगा, कि यह बेवकूफी मेरी अपनी ही है। वह बेवकूफी जिसे लोग ईश्वर प्रदत्त प्रतिभा का नाम दिया करते हैं।"

"यह बकवास बन्द करो, अतीन! तुम्हारी जिन्दगी बरबाद करने वाली मैं ही हूँ। तुम कवि थे और मैंने ही तुम्हें क्रान्तिकारी बनाया है। यह मैं कैसे भूल सकती हूँ! कि मैंने जब तुम्हारी जड़ को ही खोद कर फेंक दिया है, तब वह ज़ड़ फिर कैसे लग सकती है?"

अतीन मुस्करा कर इला की ओर देखने लगा, बोला "तुम्हारा अब यथार्थ रूप प्रगट हो रहा है, इला! तुम्हारी बातों से यही ज्ञात होता है कि तुम देश कल्याण की इस क्रान्तिकारी रंग भूमि में केवल अभि ही अभिनय कर रही हो। तुम्हारा यह यथार्थ रूप नहीं। तुम्हारी प्रकृति रोमेन्टिक है। तुम उन स्त्रियों में से हो जो परिवार में थाली में दूध-भात परोसने के बाद समीप बैठ कर पंखा झला करती हैं। राजनीति के अखाड़े में लट्ठ चलने पर पागल सी बन कर आँखें लाल कर आ खड़ी

होने वाली तुम स्त्री नहीं हो। और यदि ऐसी तुम हो भी जाती हो तो तुम्हारा यह वास्तविक रूप नहीं होता।"

इला को हँसी आ गई। कहने लगी, "बातों के बनाने में तुमने औरतों को भी मात दे दी।"

"हूँ! औरतें कहीं बात करना जानती हैं? वे तो मेरी बकवास किया करती हैं।' मैं बातों के इस तूफान से ही लोगों की जड़ता को उखाड़ फेंकूँगा।' यह मैंने एक बार अपने मन में तूफानी बादलों की तरह एकत्रित पाया था। वे सब बदल अब उड़ कर किधर गए? तुम आज बलात् मेरे मन में अपनी जीत का विजय-पताका फहराना चाहती हो?"

"तुम्हारे पाँव पड़ती हूँ, अतीन! मुझे यह बताओ कि यदि मेरी ओर से कोई भूल हुई तो तुमने क्यों की। तुमने क्यों अपने मन के विपरीत काम करना स्वीकार किया?"

"इला, यह मेरे स्वभाव की विशेषता थी। इसके अतिरिक्त मेरे पास कोई और युक्ति थी ही नहीं। यदि मैं अपने हृदय के इस क्लेश को न जाहिर होने देता तो तुम अपना मुँह कर निकल जातीं। किसी प्रकार भी यह न जान पातीं कि मैं तुम्हें कितना प्रेम करता हूं। अब तुम इस बात को भी अनसुनी न कर देना। यह मत कह बैठना कि मैं तुम्हें नहीं देश को प्रेम करती हूँ।"

"नहीं अतीन! यह मैं न कहूँगी। मुझे ज्ञात है कि यह मेरा देश के प्रति प्रेम नहीं है"

"नितान्त ऐसा ही है, यह भी मैं नहीं कह सकता। देश-सेवा करने की भावना और तुमको प्राप्त करने की चाह, दोनों एक एक साथ मिल गई हैं। एक जमाना था जब पुरुष पुरुषत्व के बल से नारी को प्राप्त करता था। आज मेरे सामने भी वही समस्या है, मौत की परवाह न करते हुए तुम्हें प्राप्त करने का मुझे शुभ अवसर मिला है। तुम इतनी महत्व की बात को भूल कर इस बात का दुख कर रही हो कि मेरे कार्य में कोई परिवर्तन आ गया है।"

"देखो अतीन! घर-गृहस्थी के काम-काज की प्रेरणा स्त्रियों में स्वभाव से होती है। मेरी एक बात से तुम्हें सहमत होना पड़ेगा। वह यह है कि मेरे पास मेरे पिताजी का दिया हुआ एक घर है और कुछ रुपए भी मेरे नाम से जमा हैं। मेरी बात मान कर मुझसे यह सब धन-सम्पत्ति ले लो। इसमें संकोच करने की आवश्यकता नहीं। मैं तुमसे बारम्बार यही विनय करती हूँ। मान लो, अतीन! मेरा जो कुछ भी हैं, वह सब तुम्हारा ही तो है।"

इला की इस व्यग्रता से अतीन को हँसी आ गई। कहने लगा, "तुम घबराती क्यों हो, इला! यदि आवश्यकता हुई तो मैं पुस्तकों की लिखाई करूँगा, अथवा मेहनत-मजदूरी ही कर लूँगा, तुम बे फिक्र रहो!"

और अतीन इसी तरह हँसता रहा।

इला ने वेदनासिक्त वाणी में कहा, "मुझे मालूम है कि

तुम मुझ से अप्रसन्न होगे, कारण कि मैंने यह धन देश-कार्य में नहीं लगाया। मैं समझती हूं कि यह मेरी गलती हुई।"

"नहीं इला! यथार्थ बात तो यह है कि धन के अभाव में नारी की शोभा नहीं हो पाती।"

"तुम परिहास क्यों करते हो! लेकिन हमारा वृत्त बड़ा संकीर्ण होता है। इसी में हमें कचरा-कूड़ा जमा करना होता है। तो क्या तुम्हारा यही विचार है कि अपने जीने के लिए ही हम लोग ऐसा ही करती हैं। नहीं, अतीन, नहीं। यह सब अपने जीने के लिए नहीं करते, यह अपने प्यार की खातिर हमें करना पड़ता है। प्रेम के अभाव में नारी का जीवन, घर-गृहस्थी सब बेकार हो जाती है। धन-सम्पत्ति रख कर ही मैं क्या करूँगी। वह तो तुम्हारा है, तुम्हें ही उसे लेना होगा।"

"नहीं इला! मैं तुम्हारा धन कैसे ले सकता हूँ? आज तक पुरुषों का काम धन-दौलत कमाना और स्त्रियों का उनकी सेवा करना रहा है। इसके विपरीत होने से सिर नीचा होता है। जिस वस्तु को लेने के लिए मैं बिना किसी संकोच के तुम्हारे सामने हाथ पसार सकता था, उसके लिए तुमने मना ही कर दिया। अपनी प्रतिज्ञा की दीवाल को तुमने मेरे सम्मुख खड़ा कर दिया। कर्त्तव्य ही तुम्हारे लिए सब कुछ है। इस कर्त्तव्य की वेदी पर तुमने मेरी और अपनी प्रीत की बलि चढ़ादी। स्मरण है, इला! उस दिन तुम नारायणी विद्यालय के हिसाब-किताब देख रही थीं। मैं व्याकुल हो तुम्हारे निकट पहुँचा था। जैसे कोई पक्षी तूफान के चक्कर में आकर

नीचे आ गिरा हो, मेरा मन ठीक ऐसे ही तुम्हारे चरणों में कोई आघात पा कर लोटने लगा था। लेकिन तुमने मुँह उठा कर मेरी ओर देखा भी नहीं। तुम अपने कार्य में व्यस्त थीं और मैं मौन हो तुम्हारी कुसुम-किसलयों की भाँति की उँगलियों को निरख रहा था। मन में यही आता था कि मैं इन कोमल उँगलियों को स्पर्श करूँ जिससे मेरे तन-मन पर अमृत-वर्षा होने लगे। लेकिन देवी किसी प्रकार प्रसन्न न हो सकी। मेरे प्रति उसे बिलकुल दया नहीं हुई। ओह, तुम कितनी निर्दयी और कठोर हो। और केवल इतना ही नहीं. कृपण भी हो। उस दिन मेरे दिल को कितनी वेदना हुई। उस दिन तो तुमने मुझे कुछ भी नहीं देना चाहा था, और आज तुम सब कुछ देने को तैयार हो। मेरे मन में आया कि तुम्हारे लिए मुझे कुछ और त्याग तथा तपस्या करनी होगी। तभी कदाचित तुम्हारी मुझ पर दया हो। किन्तु प्राणों के अतिरिक्त मेरे पास और था ही क्या? इसी से मैंने निश्चय किया कि इन्हें भी देकर तुम्हारे योग्य बन जाऊँ। एक दिन जब फटा हुआ सिर तथा खून से लथपथ शरीर लिये मैं जब तुम्हारे सम्मुख मर रहा हूंगा, तब शायद तुम मेरे पार्थिव श को अपने अंक में भरने को तैयार हो जाओ।"

इला की आँखों में अश्रु छलछला उठे। उसने आहत स्वर में कहा, "आह, अतीन। ऐसे बोल मत बोलो। मेरा हृदय टूक-टूक हो उठा है। अपनी वस्तु को तुमने बलात् क्यों न प्राप्त किया? क्यों इस बात का इन्तजार किया कि मैं तुम्हें उसे दूँ। क्या मैं देती, तभी तुम उसे लेते? जब तुम्हें झिझक होती है तो मेरे संमुख भी झिझक की पहाड़ी आ खड़ी होती है।

क्या करूँ इला ? मेरा यह जन्मगत स्वभाव रहा है कि जैसे बने तैसे नारी की मर्यादा रखनी चाहिए। इसलिए मेरा मन इसके लिए इतना कुंठित हो उठता है, मुझे इतनी झिझक अनुभव होने लगती है।"

अब इला अतीन के और भी निकट सरक कर बैठ गई। दोनों भुजाऐं पसार उसने अतीन के सिर को अपने वक्ष से सटा लिया और निःशब्द बैठी रही। बीच-बीच में जब-तब उसके बालों में उँगलियाँ उलझा देती और उनसे खेलने लगती।

अतीन काफी देर तक एक अपूर्व आनन्द से विह्वल हो पड़ा रहा। फिर एकाएक सिर उठा कर बैठ गया और इला के हाथ को अपने हाथ में लेता हुआ, बोला—

"जिस दिन मोकामाघाट स्टेशन पर स्टीमर में तुम्हें प्रथम बार देखा, उसी दिन से ही मेरा जी आकाश में उड़ान भर उठा था। आकाश में कल्पना के रंग-बिरंगे फूलों की रचना होने लगी। तुम्हें उस दिन की बात याद होगी न इला ! अथवा तुम्हें वह पुरानी बात लगती है, अब ?

"नहीं अतीन। पुरानी तो नहीं हुई, कुछ याद भी है, फिर भी तुम सुनाओ।'

"तो सुनो। उस दिन जिन परिस्थितियों के मध्य मैंने तुम्हें देखा, उनमें मोह विद्यमान था। दिवस का अवसान था और सांयकाल होता जा रहा था। आकाश में बादलों पर ढलते हुए सूरज की लाली छिटक कर उसी तरह शोभायमान

प्रतीत होती थी–जिस तरह गोधूलि के समय हमारे यहां प्रथमबार नव वधू को देखा जाता है। मेरे लिए वह बड़ा पुनीत अवसर था। संमुख ही गंगा का जल आकाश की लालिमा लेकर लहरा रहा था। उसी रंगीन वस्त्रों से सज्जित पृष्ठभूमि में तुम्हारी भव्य मूर्ति मेरे हृदय में हमेशा के लिए स्थान ले बैठी।'

यह कहते हुए अतीन कण्ठ-स्वर मन की गहनता में डूब कर रह गया। कुछ देर पश्चात् जैसे स्वप्नावस्था दूर हुई, वह फिर कहने लगा "फिर क्या बात हुई? क्या तुम्हें स्मरण है, इला? उसके बाद तुम्हारा आवाज मेरे कानों में पहुँची। तुम्हारे साथ-साथ मैं भी इस क्रान्ति की भँवर में कूद पड़ा। और आज उस बहाव में पड़ कर कहाँ से कहाँ आ पहुँचा हूं। मुझे दुख तो इस बात का है कि मैं तुमसे भी दूर हो गया हूँ अब तुम्हें भी पकड़ने में असमर्थ हूँ। तुम इन सब बातों को कैसे जान पाओगी?"

"मैं जानना तो चाहती हूँ, अतीन तुम मुझे बताओ न!"

"सब बातें तो कह नहीं सकता, इला। यह सब कहना निषेध है। यदि निषेध भी न होता तो भी तुम्हें बताने से क्या फायदा?"

"क्या कहते हो?" इला चौंक उठी।

"छोड़ों भी इन बेकार की बातों को। अब प्रकाश कम हुआ जाता है। आओ इला। मेरे समीप आओ। मेरे समीप आओ। मेरी आँखें संसार छोड़ कर केवल तुम्हारी ओर ही लगी हैं। मेरे हृदय के कपाट सब ओर से बन्द हैं, केवल तुम्हारी ओर का एक कपाट खुला है और द्वार के सुनहरी फ्रेम के बीच में सिर्फ तुम्हारी मूर्ति विराजमान है। सब कुछ भूल कर

मैं उसी ओर देखता हूँ, यह देखो, दो-एक घुंघराली अलकें तुम्हारी आँखों के ऊपर आ पड़ी हैं। तुम अजानी बनी उन्हें एक ओर हटा रही हो। काली किनारी की टसर की साड़ी कन्धे से नीचे सरकी जा रही है, लेकिन, आँचल जूड़े सेफ्टीपिन से उलझ कर रह गया है। अहा। तुम्हारे नेत्रों में थकान और दुख की काली छाया कैसी पड़ी है। अधरों पर विनती की कैसी करुण झलक है। इस धुंधली रोशनी के बीच तुम्हारा मुख कितना अस्पष्ट और उदास दीख रहा है, मैं यह साफ-साफ नहीं कह पा रहा। तुम्हारे चेहरे पर यह कैसा अनोखा मधुर और गंभीर विषाद-भाव स्पष्ट हो रहा है। लेकिन इला, तुम्हारी इस सुन्दर आकृति के समीप ही बहुत-सी असुन्दर आकृतियाँ भी भृकुटियां चढ़ाए घूम रही हैं।"

"अब और यह तुम क्या कहने लगे ? समझ में कुछ भी तो आता नहीं।"

"क्षमा करना इला। तुम्हारे यथार्थ चित्र में कहीं-कहीं अनेकों अवास्तविक बातें अंकित प्रतीत होती हैं। स्मरण है, तुमने मुझे श्रमिकों की बस्ती में जाकर रहने को कहा था ? तुम चाहती थीं कि मेरे हृदय से धन-दौलत का जो अहंकार था वह मिट्टी में मिल जाय। मैं भी तुम्हारे इस तात्पर्य को समझ गया और एक मजाक का खेल समझ कर इस कार्य में लग गया। श्रमिकों की, गाड़ीवानों की बस्ती में चक्कर लगाना प्रारंभ किया। अहीरों के गांव में उनके साथ दादा-चाचा का संबन्ध निश्चय कर गाय-भैसों के नौहरों के ससीप घूमता रहता। किन्तु इस संबंध में एक दिखावा था जिसे उन जोगों ने भी भाँप लिया। तब मैं भी समझ गया कि

मेरा यहाँ रहना अब अधिक दिन न चल पायेगा। ऐसे भी अनेक महान् व्यक्ति हैं जिनकी आवाज प्रत्येक बाजे की आवाज से मिल जाती है। यहाँ तक कि रुई धुनने की मशीन से भी। उनके लिए यह बात प्राकृतिक है और इसलिए यह फबता भी है। हम लोग इसकी नकल करने का प्रयत्न भी करते हैं, फिर स्वर बेसुरा हो जाता है।"

आश्चर्य करती बोली, इला—"तुम्हें आज क्या हो गया है, अतीन ! किस व्यथा के कारण तुम आज ऐसी बातें कर रहे हो ? क्या तुम्हारे कहने का यह अर्थ नहीं कि इच्छा न होते हुए भी अपना फर्ज समझ कर काम करना मुमकिन नहीं होता ?"

"इसमें इच्छा और दिलचस्पी का कोई प्रश्न नहीं ! बात है तो केवल प्रकृति की। भगवान श्री कृष्ण ने अर्जुन की इच्छा न देखते हुए भी उसे वीर के कर्त्तव्यों को पालन करने का कहा था। उन्होंने किसान समझ कर कुरुक्षेत्र-मैदान को जोतने का उपदेश तो नहीं दिया।

इला चुप हो सुन रही थी, अब कहने लगी–"अच्छा अतीन ! मेरी समझ में आज तक नहीं आया कि जब तुम्हें यह बात मालूम हो गई थी, तुम यह सब अनुभव भी करने लगे थे कि यह मार्ग गलत है और तुम्हारे लिये नहीं, तो तुमने यह छोड़ा क्यों ?"

"इसके उत्तर में मुझे अनेकों बातें कहनी हैं, इला ! और आज मैं तुम्हें सब बता दूँगा। इस मार्ग पर आने से पूर्व अनेकों बातें ऐसी भी थीं जिन्हें मैं जानता नहीं था और न

एक और बात यह है कि उन लड़कों के साथ रह कर मुझे उनसे कभी उनके बारे में विचार ही किया था यहां आ कर मुझे ऐसे भी अल्पआयु के लड़के मिले ने यदि आयु में छोटे न होते तो मैं उनकी चरण-धूलि मस्तक पर लगाता । ये सब लड़के महान् थे । आज भी उनके स्मरण कर मेरा हृदय व्यथा से आहें भर उठता है । मैंने उन लड़कों को क्या-क्या सहते देखा, किस प्रकार उनको अपमानित भी होना पड़ा—ये सब व्यथा-भरी बातें कहीं मुद्रित भी हो सकेंगी ? उन लड़कों के दुख और अपमान को देखकर ही मैं एक असह्य यन्त्रणा अनुभव कर पागल सा हो उठा था । प्रत्येक बार मन ने यही प्रण किया कि इन लड़कों पर जो अत्याचार हुआ है, कुछ भी हो मैं उसका प्रतिकार अवश्य लूँगा । मैं किसी का डर नहीं मानूँगा, किसी अत्याचार के सम्मुख नहीं झुकूँगा ।"

"ठीक ! यह तो मुझे भी ज्ञात था, अतीन ! किन्तु इसके पश्चात् सहसा तुम्हारा मन बदल कैसे गया ?"

"मन का बदल जाना स्वाभाविक है । देखो इला, एक शक्तिशाली राज्य-शासन के विरुद्ध लडाई के लिए खड़ा होने वाला व्यक्ति कमजोर होने पर भी, एक सबल की बराबरी करने के कारण, सम्मानीय हो जाता है । बस, इसी सम्मान की प्राप्ति के लिए मैंने कल्पना की थी । किन्तु मेरी यह कल्पना निरी कल्पना ही रह गई । ज्यों-ज्यों समय बीतने लगा, मेरी नजर के सामने रहने वाले ये युवक शनैः शनैः अपने ऊँचे आदर्श से गिर कर मनुष्यत्व भी खोने लगे । यह देख कर मुझे अपार दुख हुआ । इतनी बड़ी हानि, आदर्श की यह भीषण बलि मुझेसहन न हुई । बात-बात पर पग-पग पर मैंने विरोध

किया अन्याय के सामनें भी आया। मुझे यह भली प्रकार ज्ञात था कि हमारे दल के युवक मेरी बात को हँसी में उड़ा देंगे अथवा क्रोधित हो मेरा ही मजाक बनाने लगें। तिस पर भी मैंने हर बार उनको यही समझाने का प्रयत्न किया कि दूसरी ओर से जो तुम पर अत्याचार हो रहा है, तुम्हारे साथ अन्याय किया जा रहा है, उसके उत्तर में हमारी ओर से भी अत्याचार व अन्याय होने लगे. ऐसी भावना ठीक नहीं है। यह तो शत्रु के सम्मुख घुटने टेकने वाली बात हुई। हमें पराजय स्वीकार नहीं हैं। हम तो पराजित होने पर भी शत्रु के सामने यही प्रमाणित करेंगे कि हमारा आदर्श उनसे कितना उच्च है। यदि हमारा आदंश–देश-सेवा की हमारी प्रेरणा इतनी उच्च-स्तर की न होती तो हार की संभावना समझते हुए भी हमारे अन्दर एक शक्तिशाली शासन से लड़ने को इतनी हिम्मत कहाँ से आती ? क्या मूर्खों के सदृश्य आत्म-हत्या करना हमारा उद्देश्य था ? किन्तु इला सब बेकार हुआ। मेरी सारी कोशिशें बेकार हुईं। मेरी बात की ओर किसी ने ध्यान नहीं दिया, समझने का प्रयत्न भी किसी ने न किया। यदि एक-दो ने ध्यान भी दिया तो उससे कुछ लाभ नहीं हो सका।"

"इस समय भी तुमने दल को क्यों न छोड़ा ?"

"उस समय बहुत देर हो चुकी थी। छोड़ना असम्भव होगया था। उस समय दुश्मन मजबूत जाल ने लड़कों को चारों ओर से घेर लिया था। उनका बचना कठिन हो गया था। इस हालत मैं उनका साथ कैसे छोड़ा सकता था, तुम्ही बताओ. इला ! दण्डित होने के भय से यदि छोड़ कर भाग जाता जो क्या इला तुम मुझसे घृणा न करने लगतीं।

अपार प्रेम हो गया था। मैंने उनके कामों की ओर विचार कर देखा तो बेचारों को एकदम निर्दोष और असहाय पाया। बस,इसी तरह मुझे उनके प्रति सहानुभूति हुई। मैंने उन पर क्रोध भी किया, घृणा भी की—किन्तु, किसी भी प्रकार उन्हें त्याग नहीं सका। एक बात का अनुभव मुझे अच्छा हुआ, वह यह कि हमारी शक्ति अभी बहुत कम है, यदि हम लड़ने को तैयार हो जाँय तो हमारी बड़ी बुरी हालत होगी। रोग-ग्रस्त होना सभी के लिए कष्टकारक होता है किन्तु एक निर्बल व्यक्ति लिए रोग-ग्रस्त होना खतरनाक ही होता है। जिनके पास शारीरिक बल का अभाव नहीं हैं, वे व्यक्ति ही लोगों का अपमान कर मानवता को पाँव-तले रौंदा करते हैं। लेकिन उनकी जीत की झण्डी केवल कुछ दिनों के लिए ही फहरा सकती है यह भी सच है। हमारे पास ऐसी शक्ति का अभाव है। इसी से हमारे लिए यह बात नामुमकिन है, फिर भी हम लोग कमर कस कर इस मार्ग पर चलने को प्रस्तुत हैं। आखिर में होगा यही कि हम लोग हार के अन्तिम छोर पर पहुँच कर सिर से पांव तक कलंक के काले रङ्ग में रंग कर बदनामी के काले अन्धकार में डूब जाँयेगे। हम मुँह दिखाने योग्य भी न रहेंगे।" इतना कहकर अतीन गंभीर हो उठा। वह भविष्य के अन्धकार की ओर उदास और निराश दृष्टि से देखता हुआ चुप बैठा रहा। उसके उदास मुख से स्पष्ट होता था कि उसे कहीं से भी कोई प्रकाश-किरण नहीं दीख पा रही।

कुछ देर पश्चात् इला ने धीमी आवाज में कहा, "अतीन, कुछ दिनों से एक भयावना रहस्यपूर्ण चित्र मेरी नजरों के सम्मुख आ रहा है। देश की सेवा और देश की आजादी यह

कितने गौरव की बात है। इसी गौरव को सामने रख कर हम इस कार्य में संलग्न हुए थे। लेकिन अब परस्पर की ईर्ष्या, अन्याय, अत्याचार, सन्देह एवं हिंसा से हमारा वह उच्च गौरव-पूर्ण आदर्श मिट्टी में मिल गया। शर्म के कारण हमारे चेहरे काले पड़े हुए हैं। पानी में कूद जाना सरल था, लेकिन भँवर से मुक्ति पाना कैसे सम्भव होगा, यह मेरी समझ के बाहर है।"

अतीन बोला, "महाभारत के धर्म-युद्ध में लक्ष्य था—'जितो वापि महीतलं,मृत्यो वापि स्वर्गम्'*। लेकिन हमारे सम्मुख ऐसा कोई लक्ष्य नहीं था। हम लोगों को इस युद्ध में किसी भी पुरस्कार की प्राप्ति असंभव है। हम लोगों का कर्मफल ही इसी तरह का है। यहां के कर्म का फल यहीं चुकाना पड़ेगा।"

इला ने कातर स्वर में कहा, "मैं सब जानती हूं, अतीन! तिस पर भी मुझे एक बात से दुःख होता है कि तुम कुछ दिनों से आजादी के इस आन्दोलन के विषय में! कुछ रुष्ट होकर बात करते हो। इस बात से मुझे बड़ा आघात पहुँचता है।"

"इसकी भी एक वजह है, इला! मैं तुम्हें विश्वास दिखा कर कहता हूँ कि बिना किसी वजह के मेरे अन्दर कोई परिवर्तन आना मुमकिन नहीं था। अब तुम्हें वह सब बताने से कुछ लाभ भी तो नहीं। अब वक्त भी नहीं है इतना।"

"वक्त न भी हो तो तुम्हें बताना ही होगा।"

"इला मैं आज तुम्हारे सम्मुख यह बात स्वीकार करता हूँ, "अतीन कहने लगा, कि तुम लोग जिस रूप में 'देश भक्त'

---

* जीतने पर यश और हार कर मरने पर स्वर्ग की प्राप्त होगी।

शब्द का प्रयोग करते हो, उस रूप का मैं व्यक्ति नहीं हूं। मेरे अन्दर देशभक्ति से भी बढ़ कर कुछ और है। और इसे अपने मन में सबसे उच्च स्थान प्राप्त होना चाहिए। जो व्यक्ति इसे देशभक्ति नहीं मानते, उन लोगों की देशभक्ति घड़ियाल की पीठ पर नदी पार करने जैसी सिद्ध होती हैं। उनकी नीचता, परस्पर का मिथ्या व्यवहार, अविश्वास, ईर्ष्या, शक्ति या अधिकार पाने का षड़यन्त्र। कीचड़ के इस कुत्सित वातावरण में रात-दिन झूठ की विषाक्त वायु में रहते हुए मेरे लिए अपनी आदतों की रक्षा करना असम्भव हो गया। भविष्य में मैं संसार का कौनसा बड़ा कार्य कर पाऊंगा, यह तो बताओ।

इला चुप रहे आई। कोई उत्तर न दे पाई। कुछ देर बाद कहने लगी "अच्छा, अतीन! जिसे तुम आत्मघात करना बताते हो, वह क्या केवल हमारे देश के लिए ही सत्य है?"

"नहीं इला! मैं यह तो कहता ही नहीं। देश की आत्मा को कुचल कर भी देश के प्राणों को बचाया जा सकता है। इस भयानक मिथ्या बात को संसार भर के राष्ट्रवादी जानवरों की तरह चीख-चीख कर कह रहे हैं। इसे सुन कर मेरा हृदय टूक-टूक हुआ जाता है। मन के अन्दर इस मिथ्या बात का विरोध करने की इच्छा तूफान की तरह मचल उठती है, लेकिन फिर भी मैं मजबूर हूं। मेरी बात को सुनेगा कौन? सत्य बात मैं कह भी सकता था, और मेरी यह बात किसी पृथ्वी के अन्दर छिप कर देश की आजादी के लिये प्रयत्न करने से बड़ी सिद्ध होती। किन्तु, इसके लिए इस जन्म में मुझे अवसर नहीं है। इसलिये आज मैं असह्य दुख का अनुभव करने लगा हूँ।"

इला ने अतीन के करुण मुख की ओर देख कर एक दर्घश्वास ली और बोली, "अतीनू ! अब भी वक्त है। तुम इस रास्ते से लौट आओ।"

"नहीं, इला ! अब वक्त नहीं है, फिर लौटने । भी तो नहीं।"

"नहीं ! हे अतीन ! रास्ता क्यों नहीं है ?'

"सुनो, इला ! मार्ग पर बढ़ते-बढ़ते यदि मैं किसी ऐसे स्थान पर पहुँच जाऊँ जहाँ से वापिस आना ना मुमकिन हो तो वहां की जिम्मेदारी को भी पूरा करना जरूरी हो जाता है। क्योंकि ऐसा करना चाहिये न ?

इला ने कोई उत्तर न दे कर अतीन के कण्ठ में अपनी भुजाओं की माला डाल दी फिर बोली, मैं कहती हूँ, अतीनू, अव भी लौट चलो ! अपने साथ मेरा सर्वनाश न करो। मेरे हृदय में तुमने एक हलचल सी उठा दी है। इतने वर्षों से जिस विश्वास के आधार पर मैं खड़ी थी, उसी को तुमने हिला कर तोड़ दिया है। अब मैं एक टूटी नाव के सहारे बह रही हूँ। मुझको तुम्हीं बचा सकोगे। इस तरह चुप होकर बैठने से काम नहीं चलेगा। बोलो, अतीन ! कुछ तो बोलो ! मैं तुम्हारे आदेश को सुनने के लिये रुकी हुई हूँ। तुम आदेश दो। मै अभी अपनी प्रतिज्ञा तोड़ने को तैयार हूँ। मुझे स्वीकार है कि मुझसे भूल हुई है। मुझे क्षमा करो अतीन !'

"नहीं इला ! "इला के सिर धीमे-धीमे थपकी देता हुआ अतीन कहने लगा, "अब कोई और युक्ति है ही नहीं।"

व्याकुल हो उठी इला, "कोई युक्ति शेष नहीं है ? क्या कहते हो अतीन ? मेरा कहना है कि अवश्य ही कोई युक्ति है। क्या हम इसी प्रकार असहाय अवस्था में मृत्यु को प्राप्त करेंगे ?" इला के स्वरों से अपरिमित व्यथा झर उठी। उसकी कातर वाणी उस अन्धेरे में बड़ी देर तक रुदन करती रही।

अतीन ने फिर अपनी बात पर जोर दिया, "नहीं इला, यह सच है कि अब कोई युक्ति नहीं है। यदि वाण अपने लक्ष्य तक भी न पहुँचा सका है तो उसका तरकस में लौटना एकदम असम्भव बात है।"

विह्वल हो इला आग्रह करती बोली, "मैं स्वयं वर चुनती हूँ अतीन ! तुम मुझे अपनी पत्नी बनालो। किसी भी रीति से ही क्यों न हो, तुम मुझसे विवाह कर लो और मुझे अपने साथ सहधर्मिणी बना कर ले चलो ! अब और देर करने की आवश्यकता नहीं है अतीन !"

इला की ऐसी व्यथाभरी बात सुन कर अतीन मुसकरा उठा, बोला, "जिस रास्ते में धर्म कोई माने नहीं रखता, उस पर सहधर्मिणी बना कर ले चलने की बात कैसे मान लूँ। यदि किसी विपत्ति के सामना करने की बात होती तो मैं कदाचित मैं इसके लिए मना करता ही नहीं, किन्तु यह तो.. छोड़ो भी इला...इस बात को अब रहने दो। मेरी जीवन-नौका का डूबने का समय आ पहुँचा है। हां अभी भी मेरे जीवन में एक ही सत्य का आश्रय शेष है. वह जरा तुम्हारे मुँह से सुनना चाहता हूँ।"

"वह कौनसा सत्य है ?"

"यही कि तुम मुझसे प्रेम करती हो।"

"हाँ, अतीन, मैं तुम्हें प्रेम करती हूँ। यह सत्य प्रकट करने में मैं गर्व अनुभव करती हूँ।"

इतना कहते ही इला की आँखों से आँसू झर-झर-झर झर उठे। गहरी व्यथा-वेदना से वह सिर झुकाये बैठी रही। उसके मुख से एक शब्द भी न निकला। लगता था कि उसके हृदय का खून अश्रु के रूप में आंखों से बह रहा हो। एक असह्य पीड़ा के कारण उसका गला अवरुद्ध हो गया। बहुत देर पश्चात् वह रुँधे हुए स्वर से बोली—

"मैं फिर विनती करती हूँ, अतीन! मुझसे कुछ तो ले ही लो।...यह लो, मेरे कण्ठ-हार को ही ले लो।" इतना कह कर उसने अपने गले में से हार उतार कर अतीन के पांवों में रख दिया।

अतीन ने प्यार भरी नजर से इला की ओर देखा। फिर अपने सिर को हिलाते हुए, बोला, "नहीं, इला! यह नहीं हो सकता।" और उसने हार को उठा कर बड़े प्रेम के साथ पुनः इला के गले में पहना दिया।

इला दुखी हो उठी, "क्यों अतीन! अभिमान करने लगे?"

"हाँ इला, अभिमान कर उठा। और क्यों न करता? एक दिन था जब तुम देतीं तो मस्तक पर चढ़ा लेता। आज तुमने दिया तो मैं पहन भी न सका। मैं अपनी खाली जेब को भरने के लिये अपने अभाव के गड्ढे को भरने के लिए मैं अब किसी से भिक्षा नहीं लूँगा, तुमसे भी नहीं, इला!"

इला अतीन के चरणों में गिर गई, कहने लगी, " अतीन, मुझे स्वीकार करो, मुझे, अपने साथ ले चलो।"

व्याकुल हो अतीन बोला, "ऐसी बात न करो, इला ! मुझे किसी लाभ में मत फांसो। मैं तुम्हें कहां ले चलूँ ? मेरा मार्ग तुम्हारे योग्य नहीं हैं। इला, मैं तुम्हें कैसे समझाऊँ ?''

यदि वह मार्ग मेरे योग्य नहीं तो तुम्हारे योग्य भी नहीं। मत बढ़ो अब, इस मार्ग पर ! अब भी समय है, चलो, लौट चलें, अतीन ! मेरी बात मानलो।"

एक ठण्डी साँस लेता हुआ अतीन बोला, "तुम ठीक ही कहती हो इला, यह मेरे योग्य भी मार्ग नहीं है। यह मार्ग मेरा भले ही न हो, लेकिन इस मार्ग के लिए हूं। गले की फांसी को कौन गले का आभूषण कहेगा ?''

इला ने इस बार आकुल हो, अतीन के दोनों पांवों को कस कर पकड़ लिया। कहने लगी, "अतीन, तुम वह व्यक्ति हो जिसके चले जाने पर इला जिन्दा नहीं रह सकती। तुम्हारे अलावा मेरा कोई दूसरा नहीं है। अतीन ! क्या तुम्हें मेरे इस कथन पर विश्वास है ? सन्देह तो नहीं कर रहे ? नहीं, अतीन ! इस पर सन्देह न करना। मेरे मरजाने के बाद एक दिन तुम यह अवश्य कहोगे कि इला ने सच ही कहा था।"

सहसा ही दूर से सीटी का एक तीव्र स्वर उस अन्धकार को भेदता हुआ वहाँ आ पहुँचा। इला अतीन दोनों चौंक उठे। अतीन इला को एक ओर हटा कर उछल कर खड़ा होता हुआ बोला, "अच्छा, मैं चला।"

इला ने उसे कस कर पकड़ लिया, बोली, "नहीं अतीन! कदापि नहीं, तुम कुछ देर और रुको।"

"नहीं, नहीं, इला ! मुझको छोड़दो अब।"

"कहां जाओगे, अतीन ?"

"पता नहीं, इला।"

अतीन के पाँवों को तेजी से पकड़ कर इला कहने लगी, "मैं तुम्हारे चरणों की दासी हूँ, अतीन। मुझे इस प्रकार मत त्यागो, मत जाओ अतीन, मुझे छोड़ कर।"

इला की इस करुण विनय से अतीन का हृदय द्रवित हो उठा। एक क्षण के लिए वह असमंजस में पड़ा और ठिठक कर वहीं खड़ा रह गया।

तभी पुनः सीटी का स्वर सुनाई दिया। अतीन चीख कर बोला, "छोड़ो, इला !" और बलात् अपने पांवों को छुड़ा कर वह अन्धकार में विलीन हो गया।

कमरे में सायंकाल का अन्धेरा और भी बढ़ता गया। इला उसी तरह धरती पर औंधे मुँह पड़ी रही। वह अब रो नहीं रही थी। उसकी आंखों के आँसू अब सूख गए थे। लेकिन उसके अन्दर की गहराई तक एक अपूर्व शिथिलता व्याप्त हो गई थी।

सहसा उस अन्धेरे को चीर कर किसी की कठोर आवाज आई, "इला !"

इला चौंक कर उठ बैठी।

सम्मुख ही इन्द्रनाथ खड़े थे।

इला कह उठी, "अतीन को लौटा कर ले आइए, मास्टर जी !"

वज्र-कठोर वाणी से गरज उठे, इन्द्रनाथ, "नहीं, अतीन अब नहीं लौट सकता। तुम क्यों यहाँ आईं ?"

"मैं अपनी मर्जी से ही इधर आगई।"

धिक्कारपूर्ण आवाज से इन्द्रनाथ बोले, "तुम्हारे बारे में कौन सोच रहा है ?"

इन्द्रनाथ की आँखों में एक विचित्र ज्वाला सी देख कर इला का हृदय कम्पित हो उठा।

इन्द्रनाथ ने पुनः पूछा, "तुम्हें यहां का पता कैसे ज्ञात हुआ ?"

"बटुक से ?" धीमे से उत्तर दिया इला ने।

"ओह बटुक ने तुम्हें यहाँ का पता बताया! किन्तु तुम···!···अरे तुम भी बटु के मन्तव्य को न समझ सकीं ?"

"नहीं मास्टरजी! "इला ने कहा, "समझने योग्य विवेक-शक्ति मुझमें शेष न रही थी। मैं इतनी बेचैन थी, इतनी विकल थी कि मैं कुछ भी सोच न सकी। यदि मुझसे कोई भूल हुई हो तो मुझे क्षमा करना, मास्टरजी।"

दाँतों को पीस कर दबे हुए स्वर में इन्द्रनाथ बोले, "क्षमा करूँगा तुम्हें ? यदि संभव होता तो तुम्हें इसी समय गोली से उड़ा देता।"

डसने के लिए तैयार खड़े सर्प की सी नजर इन्द्रनाथ की सी नजर इन्द्रनाथ की देख कर, इला के शरीर में एक तीव्र सिहरन दौड़ गई।

तभी इन्द्रनाथ ने पुनः कहा, "जाओ. तुरन्त घर जाओ! बाहर टैक्सी तैयार है।"

इला सिर झुकाए धीमे-धीमे कदम रखती हुई कमरे से बाहर निकल गई।

: ४ :

अपने कमरे में इला शांत-स्थिर बैठी थी। उस दिन के पश्चात् उसकी भेंट अतीन से नहीं हो सकी। इसी उद्वेग और आशंका के कारण उसके सुन्दर चेहरे पर मलिनता आगई है। आंखों के नीचे काले-काले गड़ढे बन गए हैं। उसके इस उदास और शोकाकुल मुख को देख कर कोई यह नहीं कह सकता कि यही वह खूबसूरती की बोलती तस्वीर इला कुमारी हैं।

सहसा अस्त-व्यस्त हालत में अखिल कमरे में घुसा और इला के समीप आकर धीमे स्वर में बोला, "तुम्हारे बगीचे में एक दाढ़ी वाला व्यक्ति पीछे की दीवार से कूद कर आ घुसा है। तुम्हें सूचना देने के लिए ही मैं इधर चला आया हूँ। आते समय मैंने द्वार को भीतर से बन्द कर दिया है। न मालूम वह कौन है ? कहीं वह यहां आने के ही प्रयत्न में न हो···लो, सुनो पाँवों की आवाज !" इतना कह वह अपनी जेब से छुरी निकाल कर खड़ा हो गया।

इला मुस्कराई और बोली, "तुम बड़े बहादुर हो, अखिल ! छुरी तान कर खड़े हो गए ! लाओ,

छुरी मुझे दो।" और उसने अखिल के हाथ से छुरी छीन ली।

सीढ़ियों पर से किसी का स्वर सुनाई दिया, "भय न करो इला! द्वार खोलो, यह मैं हूं, अतीन।"

अतीन का स्वर सुनते ही इला अखिल से बोली, 'द्वार खोल दो भैया!"

अखिल ने द्वार खोल दिया।

अतीन ज्योंही कमरे में आया, त्योंही अखिल ने उससे पूछा, 'वह दाढ़ीवाला व्यक्ति किधर गया?'

अतीन हँसता हुआ बोला, 'बगीचे में जाकर उसकी खोज करो···कहीं न कहीं तो दाढ़ी मिल ही जायगी। शेष शरीर यहां तुम्हारे सामने मौजूद है।···क्यों विश्वास नहीं हो रहा है? ···अखिल जाओ, उसे बगीचे में खोजो!'

अखिल हयबुद्धि की तरह खड़ा उसे देखता रहा। कुछ देर पश्चात् वह बगीचे की ओर धीमे-धीमे कदम रखता चला गया।

अखिल के चले जाने के बाद अतीन इला के समीप आया। इला प्रस्तर-मूर्ति बनी अतीन की ओर स्थिर दृष्टि से देख रही थी। उसका चेहरा रक्त-विहीन था।

इला बोली, 'अतीन! तुम किधर से आ टपके?'

'अरे, तुम्हारा चेहरा कैसा हो गया?'

इला मुस्करा कर बोली, 'हां, सौन्दर्य का लेश भी नहीं रहा अब।'

"हाँ।"

"क्या यह बात सत्य है ?" विह्वल हो उठी इला।

"कौन सी बात ?" अतीन ने पूछा।

"यही कि तुम्हें बहुत बुरा रोग लग गया है।"

अतीन हँसने लगा। बोला, "कुछ पूछो मत, इला। इस विषय में चिकित्सकों की भी सम्मति एक नहीं है। कोई कुछ कहता है तो कोई कुछ। तुम किसी की भी बात का भरोसा न करो।"

एक पल अतीन के चेहरे की ओर देखने के बाद इला बोली, 'अवश्य ही तुमने खाना नहीं खाया।"

"खाने का वषय छोड़ो इला ! हमारे पास समय कम है, इसे बेकार मत गँवाओ।"

'किन्तु अतीन !" इला विह्वल हो बोली, "तुम यहाँ आए क्यों ? फिर वापिस क्यों गए ? क्या तुम्हें यह नहीं पता कि तुम्हें गिरफ्तार कर लिया जाएगा। क्यों हो सकोगे न ?"

"अब मुझे चिन्ता नहीं है। कर लेने दो गिरफ्तार। पुलिस वालों को अधिक निराश करने की इच्छा नहीं।"

अतीन की आवाज में वज्र जैसी कठोरता थी। उसके दोनों हाथों को अपने हाथ में थामती हुई इला आवेग के साथ कह उठी, "फिर भी मुझे पूछना है कि तुम यहाँ किस लिए आये ? यहाँ आना खतरे खाली नहीं, पुलिस की भी निगरानी है, उसकी गिरफ्त में आ जाओगे—यह सभी बातें जानते हुए भी तुम यहाँ किस प्रकार आ सके ? अब तुम्हारी. सुरक्षा कैसे करूँ ?"

गम्भीर हो अतीन कह उठा, "यहाँ क्यों और कैसे आ सका, इस प्रश्न का उत्तर तुम्हें प्रस्थान करने से पूर्व अवश्य बता कर जाऊँगा। किन्तु इसके पूर्व जब तक मैं यहाँ उपस्थित हूँ तब तक मैं इस बात को मस्तिष्क में लाना नहीं चाहूंगा, इला।"

अतीन की आवाज और उसकी बात में न जाने क्या भेद था जो इला समझ भी न सकी! फिर भी उसका हृदय किसी अज्ञात आशंका से काँप उठा। उसकी सम्पूर्ण चेतनाशक्ति किसी बर्फीली चादर से ढक कर जैसे लुप्त हो गई। क्या यही मृत्यु का सन्देशा था? अब इला चिन्ता करना भूल बैठी, उसका हृदय जैसे पत्थर हो गया।

अतीन पुनः कहने लगा, 'मैं नीचे के दरवाजे बन्द कर आऊँ।" और वह नीचे चला गया। कुछ देर बाद फिर ऊपर आकर बोला, "इला, चलो छत पर चलें।"

फिर चलते-चलते वह आगे बोला, "इला, मैंने तुम्हारे कमरे की बत्तियाँ जो बुझादी हैं, तुम इससे भय मत करना। भय करने की कोई बात नहीं है। मैं तुम्हारे समीप ही जो रहूँगा।"

इला का हृदय इस बार फिर किसी आशंका से भर उठा। वह सोचने लगी, "अतीन आज यह सब क्यों कर रहा है? इससे पूर्व तो इसने न ऐसी बात ही कही और न कुछ ऐसा किया। दाढ़ी लगा कर बगीचे के पीछे की दीवार से कूदना, नीचे के सब द्वार बन्द कर आना, बत्तियों को बुझाना—आज यह सब किस उद्देश्य से हैं? यह सब क्या है? किस बात का द्योतक है?"

ऐसी ही बातें सोचती हुई इला अतीन सहित छत पर पहुँची। छत पर पहुँचने पर अतीन ने ऊपर वाला दरवाजा भी बन्द कर दिया और उसकी किवाड़ों से पीठ टिका कर अतीन बैठ गया। पास ही, उसके सम्मुख, इला जमीन पर बैठ गई।

इला को ओर मुस्कराती हुई आँखें लगा कर अतीन ने उसका हाथ अपने हाथ में ले लिया और फिर बड़े प्यार भरे शब्दों में बोला, "इला, घबराना छोड़ो! अपने हृदय पर किसी भी आशंका को मत जमने दो। अपने चेहरे पर स्वाभाविक सौन्दर्य की छटा लाओ। मान लो, जैसे कोई बात घटित ही न हुई हो। बस, हम दोनों आनन्द के साथ गप-शप में व्यस्त हैं। यह समझो कि हम दोनों रामायण की लंका काण्ड वाली स्थिति में हैं।—अरे, इला!...यह क्या? तुम्हारे हाथ बर्फ की तरह ठण्डे क्यों हो गये?...और ये कांप भी तो रहे हैं?....लाओ, मैं इन्हें गरम करदूँ।" और इतना कहते ही अतीन ने उसके दोनों हाथों को अपने वक्ष से कुर्त्ते के नीचे छिपा लिया।

फिर दोनों इसी तरह मौन बैठे रहे।

जब कुछेक क्षण ऐसे ही बीत गये तो अतीन ने ही मौन तोड़ते हुए कहा, "क्यों, भय अनुभव कर रही हो, इला!"

"क्यों अतीन, किस बात का भय?" कह कर इला ने अतीन के चेहरे की ओर देख कर बड़े विश्वास के साथ मधुर मुस्कान बिखेर दी।

अतीन ने कहा, "किस बात का भय? पूछती हो तुम! तुम्हें नहीं मालूम इला...और मालूम भी कैसे हो...कि तुम्हें मुझसे ही सबसे अधिक भय है।"

इला हंसने लगी।

"क्या कहते हो, अतीन! मैं तुमसे भय करूँगी? नहीं, नहीं, तुम परिहास कर रहे हो। और सच बात यह है कि मैं तुमसे भय नहीं खाती अपितु तुम्हारे लिए ही भयभीत बनी रहती हूं। और किसी बात के लिए मुझे भय नहीं करना।"

अतीन कहने लगा, "भुला दो इला, इन सब बातों को! सोच लो कि हम दोनों एक ऐसा रात्रि की निस्तब्धता में निश्चिन्तित मन के साथ बैठे हैं—किसी भी प्रकार की आशंका, कैसा भी भय और कैसी भी व्याकुलता का हमें अनुभव नहीं हो रहा है। आज के वातावरण से दूर—बहुत दूर हम वह जाना चाहते हैं। कारण कि आज हम भय से घिरे हुए हैं, आज के वातावरण का घेरा बहुत ही छोटा है, इससे घबराहट अनुभव होती है, हम इससे भयभीत होते हैं। इस सब से हम बच नहीं सकते, केवल मौत ही हमें इससे छुटकारा दिला सकती है, इसमें तनिक भी मिथ्या नहीं है, मिथ्या आशा तक नहीं है। इसी के अङ्क में सदा-सर्वदा सुख-शान्ति प्राप्त की जा सकती है, अन्यत्र कही नहीं।"

इला चुप थी।

अतीन का मन न जाने किधर बहक रहा था। कुछ देर बाद वह फिर स्वतः ही कह उठा—

"यह वर्तमान सरासर धोखा है, धोखा देने वाला है। मैंने जिस वस्तु की भी इच्छा की, इस वर्तमान ने मुझे धोखे में रख कर उसे प्राप्त नहीं करने दिया और उस पर 'असीम दुख' की छाप लगा दी। इला, यह दुनियाँ धोखों और झूठों से भरी

हुई है...यह सभी दो दिन का खेल है...यह जिन्दगी भी बेई-मानियों–जालसाजियों से भरी हुई है जो अनन्त के जाली हस्ताक्षर बना कर अपना काम चलाना चाहती है। लेकिन क्या जिन्दगी अनन्त हो सकती है ? इसमें कुछ भी है, सब जाल-साजी और धोखे बाजी है क्यों कि जिन्दगी की यह जालसाजी मौत के सामने आ खड़े होने पर एकदम प्रकट हो जाती है। मौत हँसती है और जिन्दगी की सारी बेईमानियों और धोखे के कामों पर एक पर्दा डाल देती है। इतने पर भी मौत की हँसी में कोई व्यंग्य नहीं होता, तनिक भी निष्ठुरता नहीं होती ”

एक क्षण के लिए अतीन चुप रहा और फिर आगे कहने लगा--“अच्छा इला यह बताओ कि तुमने कभी रात्रि की निस्तब्धता में एकाकी बैठ कर मौत की शान्त-गम्भीर मूर्ति को देखा है ? कभी यह भी लक्ष्य कर पाई हो कि उसके एक हाथ में मुक्ति और दूसरे में क्षमा है ?”

इतनी गम्भीर और व्यथा से भरी हुई बात को सुन कर भी इला की आँखों में मुस्कान की स्पष्ट झलक थी। वह बोली, “तुम यह क्यों भूल जाया करते हो अतीन कि मैं मूर्ख नारी होने पर भी तुम लोगों को विपत्ति में पड़ा देख कर सदा घबराहट से बेचैन रही हूँ और मैंने हमेशा यही सोचा है कि इससे भली तो मौत ही है।”

अतीन हँसने लगा। बोला, “तुम वास्तव में कायर ही निकलीं। तुमने मृत्यु को केवल मुक्ति का मार्ग ही समझ लिया है क्या ? मृत्यु सबसे अधिक निश्चित सबसे अधिक अटल सत्य है। जीवन के सत्य किन्तु अनिश्चित प्रवाह का अन्तिम मिलन इसी

मौत के समुद्र में होता है। सच–झूठ और सुख-दुख— सभी इस मृत्यु में समन्वित हैं। आज हम दोनों भी इस वक्त जिन्दा रहते हुए भी मौत की लम्बी भुजाओं की पकड़ से दूर नहीं हैं।"

अतीन के हाथ को अपनी गोद में रख कर इला मौन बैठी यह सोचने लगी कि आज प्रारम्भ से अब तक अतीन मृत्यु का विषय ही क्यों छेड़े हुए हैं। क्या मृत्यु उनके इतने समीप आ पहुँची है?

लेकिन इला मृत्यु को इस रहस्य को समझ न सका।

सहसा अतीन हँस पड़ा, कहने लगा—"स्मरण है इला, आज से तीन वर्ष पूर्व इसी स्थान पर तुमने मेरे जन्म-दिन का उत्सव सम्पन्न किया था?"

"हाँ, भली प्रकार स्मरण आ रहा है।"

"उस दिन तुमने मुझसे क्षमा मांगी थी कि तुमही ने मुझे बहका-फुसला कर जीवन के आदर्श मार्ग से इधर—क्रान्ति के इस मार्ग पर ला पटका है। लेकिन इला, मैं जीवन आदर्श मार्ग से ही नहीं डिगा इसके अलावा इस रास्ते पर आकर मैंने जिस पुरस्कार की आशा की थी, वह भी पूरी न हो सकी। मैंने अपनी सारी कामनाओं-भावनाओं, अपनी प्रकृति, अपना स्वभाव सब कुछ तो नष्ट कर डाला लेकिन तुमने अपने प्रण को नष्ट नहीं होने दिया। एक निम्नकोटि के संस्कार में फँस कर तुम इतनी अन्धी हो गईं कि एक निरर्थक प्रतिज्ञा को तुमने सर्वोच्च स्थान दे डाला। यदि तुम इस प्रतिज्ञा को तोड़ देती तो क्या बिगड़ जाता? मैं तो जीवित रहता ही—लेकिन हम दोनों को नया जीवन मिलता, तभी हमारा जीवन सार्थक हो पाता। लेकिन तुम ऐसा नहीं कर सकीं! अपनी इस निरर्थक प्रतिज्ञा पर स्थिर

रहे आईं । और इसके लिए ही तुमने मुझसे क्षमा याचना की बताओ फिर इसकी आवश्यकता ही क्या रह गई ? मुझे मालूम है कि तुम्हारे में एक बहुत बड़ी जिज्ञासा बनी हुई है, एक बहुत बड़ा विस्मय उपस्थित है कि तुमने मेरे हृदय को कब इतना प्रभावित कर डाला । क्यों इला, है न ऐसी ही बात !"

"हां अतीन, मैं ऐसा ही सोचती रही हूँ कि मुझ में ऐसी कौन सी शक्ति विद्यमान है कि जिसने यह सब सम्भव बना डाला ।"

"इला, तुम यह सब कैसे अनुभव करोगी । तुम्हारे अन्दर जो शक्ति है, वह तुम्हारी अपनी नहीं है । वह शक्ति महा-माया देवी की है । तभी तो उस शक्ति में इतनी माया-ममता, इतनी करुणा और स्नेह छिपा है । तुम्हारी आवाज में इला, एक ऐसा अनोखा स्वर है जो मेरे हृदय-गगन की निस्सीमता को भी सात स्वरों की मधुर रागिनी से भर देता है फिर तुम्हारी ये स्निग्ध-सुन्दर भुजाएँ. पंखुड़ियों जैसी ये उंगलियाँ—इनकी स्पर्शानुभूति सचझूठ सभी पर पारस पत्थर का सा असर करता है । ऐसे मोह-जाल में फंसना मानव की प्रकृति में है, यह मुझे स्वीकार है । इतिहास में भी ऐसी बातें पढ़ने को मिल जाती हैं । लेकिन अब वक्त आया है उस मोह-जाल को काट कर फेंकने का । इसीलिए आज मैं तुमसे हृदय खोल कर सत्य बातें कहने पर डटा हुआ हूँ, भले ही वे कितनी कटु क्यों न हों ।"

"कहो अतीन, जो कुछ भी तुम्हें कहना हो सब सुना डालो । पहिचान करने की शक्ति मुझ में कभी भी नहीं रही ;

एक बार मेरे समीप एक अनमोल रत्न आया तो मैंने मूर्खता-वश उसका मूल्य नहीं समझा और उस रत्न को हमेशा के लिए खो दिया। क्या मेरे लिए यह दण्ड पर्य्याप्त नहीं है? मैं इससे भी कठोर दण्ड तुम्हारे हाथों से भुगतने को तैयार हूँ।"

अतीन का दिल पानी-पानी होने लगा। एक आह भर कर वह बोला, 'नहीं इला, दण्ड देने का तो कोई प्रश्न ही नहीं है। मैं तुम्हें क्या दण्ड दे सकता हूँ? नहीं इला मैं तुमको माफ ही करूँगा।"

"सिर्फ माफ अतीन!... तो केवल माफीदेने के लिए ही आए थे?'

"हाँ इला, केवल माफी देने के लिए ही।"

लेकिन इसकी आवश्यकता ही क्या थी अतीन? तुमसे माफी मुझे भले ही न मिलती, लेकिन कम से कम तुम तो बच जाते। चारों तरफ से धधकती हुई आग में क्यों कूद पड़े? .. हाँ अतीन, मुझे पता है कि तुम स्वयं इससे बचना नहीं चाहते। यदि ऐसी हो बात है तो अतीन कई दिन की भिक्षा तुमसे माँगूगी। कितने ही दिनों के लिए तुम मेरे समीप रहो। मैं इच्छा के अनुसार मन भर के तुम्हारी सेवा कर लूँ-ऐसा अधिकार तुम मुझे दे दो अतीन! मना मत करना अतीन, तुम्हारे पाँव पड़ती हूं।"

"अतीन मैं फिर कहती हूँ, "इला आगे बोली, "अब भी समय है यदि तुम लौटना चाहते हो तो लौट जाओ। अपने

सत्य आदर्श से तुम गिरे नहीं अतीन ! तुम्हारे अन्तस्थल की की गहराई में उसकी अनन्त ज्योति विद्यामन है।"

बड़े दुखी स्वर में सिर हिला कर अतीन बोला, "नहीं इला, तुम्हें यह मालूम नहीं कि मैं सचमुच में उस सत्य के आदर्श से गिर चुका हूँ।"

अतीन के कण्ठ स्वर से अपार निराशा व्यक्त हो रही थी। इला विह्वलतापूर्ण स्वर में बोली, "यह मत कहो अतीन, यह मत कहो।"

तुम और क्या कहना चाहती हो इला ? जब कि मैं स्वयं ही अपने हाथों से अपने आदर्श की हत्या कर चुका हूँ। ऐसा पाप दुनियामें और कोई नहीं हो सकता। दुनिया में होने वाले किसी भी अन्याय का मैं नाश नहीं कर सका। मैंने स्वयं अपना ही सर्व-नाश किया है। इसी पाप के फल से आज तुम्हारे प्यार को पाकर भी मेरा-तुम्हारा मिलन नहीं हो सका है। आज मैं क्या तुम्हारा 'पाणिग्रहण' कर सकूँगा ? इन हाथों से ? नहीं. नहीं यह सम्भव नहीं है। किन्तु इन बातों से क्या। मेरे उस पाप कालिमा मौत के स्वच्छ पानी से धुल जाएगी। इसी से मौत के किनारे आ बैठा हूं। अब अधिक बिलम्ब नहीं है। आओ इला, अब इन बातों को छोड़ो। आज और-और बातें कर हँसते-हँसाते रहें।"

तभी पदचाप सुनाई दिया तो अतीन चौंक कर खड़ा हो गया। किन्तु ज्ञात हुआ कि कोई और नहीं अखिल है।

अखिल बोला, "एक व्यक्ति ने अतीनबाबू के नाम यह पत्र दिया हैं, उसे रास्ते मे ही खड़ा कर आया हूं।"

इला का हृदय धक् से रह गया । उसने पूछा, "कौन है ?"

अखिल से अतीन ने कहा, "अखिल, उस व्यक्ति को अन्दर आकर बैठने को कह दो।"

अखिल जिद्द करता हुआ बोला "नहीं, अन्दर कदापि नहीं आने दूंगा ।

अतीन ने पुन: कहा, "भय मत करो अखिल ! तुम इस बाबू से परिचित हो, कई दफा इसे तुमने देखा भी है। मैं कहता हूं, इसमें भय को कोई बात नहीं है। मैं जो यहाँ मौजूद हूं। तुम्हें किसी भी बात के लिये डरने की जरूरत नहीं।"

इला भी कह उठी; "जाओ अखिल, कहना मान लिया करो। मिथ्या भय करने की क्या आवश्यकता है ?"

: अब की बार इला ने कहा तो अखिल चला गया ।

इला ने अतीन से जानना चाहा; "कौन है ? क्या बटु लौट कर आ गया है ?"

"नहीं इला बटु नहीं है"

"तब कौन है ?" इला ने फिर पूछा, " बताओ, अतीन, कौन आया है ? मुझे अब कुछ अच्छा नहीं लग रहा है।'

तभी अखिल पुन: आया और कहने लगा, [वह बाबू द्वार पर धक्का मार रहे हैं । कहीं द्वार टूट न जाए ! कहते है कि द्वार खोलो, आवश्यक काम है।]

अतीन बोला, "कोई भय नहीं अखिल ! द्वार के टूटने से पूर्व ही मैं उसे शान्त कर दूँगा । तुम घबराते क्यों हो ? उस बाबू को वहीं द्वार पर रहने दो और तुम भी भाग जाओ । मैं तुम्हारी दीदी के समीप हूँ ।

इला ने अखिल को अपने वक्ष से लगा कर उसका मस्तक चूमते हुए कहा ; "मेरे राजा भैया तुम बहुत ही अच्छे भैया हो । जाओ; यहां से चले जाओ । यह लो; तुम्हारे लिए कुछ रुपए मैंने इकट्ठा कर रखे हैं । तुम्हारी दीदी का आशीष तुम्हारे साथ है ; तुम यहां से चले जाओ ।"

अखिल इला के चरण छू कर खड़ा हो गया । उसकी आंखों में आंसू झलक उठे थे । जिन्हें छिपाने के लिए वह सिर झुकाए खड़ा रहा ।

अतीन ने कहा; "सुनो अखिल, मेरी एक बात तुम्हें माननी ही पड़ेगी । यदि तुमसे कोई कुछ पूछे तो सच-सच बात कह देना, छिपाने की कोई जरूरत नहीं । कह देना कि रात के ग्यारह बजे मुझे मकान से चले जाने को कहा । क्यों कहदोगे न अखिल कि मुझे बलात् बाहर निकाल दिया ?"

अखिल को पशोपेश में पड़ा देखकर अतीन फिर मुस्करा कर कह उठा, "अच्छा, चलो, मैं तुम्हें निकाल कर इस बात को सच ही कर दूँ ।" और इतना कह कर अतीन उठा । उसने अखिल को वहाँ से बल प्रयोग करके अलग ले जाना चाहा ।

इला अपने को रोक न सकी । उसने एक बार फिर

अखिल को अपने पास खींच लिया और बड़े प्रेम से बोली, "मेरी चिन्ता करने की जरूरत नहीं अखिल! तुम्हारा अतीन दादा जो यहां है। अब कोई भय नहीं है।"

अतीन अखिल को बाहर पहुँचा कर लौट आया।

आँखें पोंछ कर इला ने पूछा, "क्यों? अखिल चला गया, अतीन।"

"हाँ इला, वह चला गया।"

"और वह व्यक्ति किधर गया?"

अतीन मुस्करा उठा। कहने लगा, "उसको भी जाने को कह दिया। लेकिन इला तुम्हें डर क्यों लग रहा है? मझसे क्या तुम्हें तनिक भी डर नहीं लगता?"

क्या कहने लगे, अतीन! तुमसे क्यों डरने लगी?"

"क्यों डरोगी, यह तो नहीं बता सकता। मैं पतन की ओर अन्तिम रूप से पहुँच चुका हूं। अब मैं कुछ भी भला नहीं कर सकता।... उस दिन हमारे दल के लोगों ने एक अनाथ विधवा का सब कुछ लूट लिया। उस विधवा के गाँव का लड़का मन्मथ है। वेष बदला हुआ होने पर भी उसने मन्मथ को पहिचान लिया और कहने लगी, "मनू बेटे, तुतने यह सब कैसे किया।... इसके आगे की घटना और भी अधिक नृशंसता-पूर्ण हैं—मन्मथ को पहिचान लेने के कारण ही उन लोगों ने उस विधवा को मार डाला। मेरे ऊपर चोरी करने का कलंक लगा। केवल चोरी नहीं, उस धन का भोग भी मैंने किया। बटु ने अतीन्द्र नामक चोर का नाम सबको बता दिया और इस प्रयत्न में लग गया कि मेरे 'केस' की सुनवाई पुलिस सुपरिनटेन्डेण्ट की देख रेख में किसी अंग्रेज न्यायाधीश के

न्यायालय में हो जिससे कि प्रमाणाभाव में मुझे दण्ड थोड़ा न मिल सके अथवा मैं छोड़ न दिया जाऊँ। इस आज्ञा के लिए वह कमिश्नर के यहां प्रयत्न कर रहा है। वह बहुत प्रसन्न है अब ! उसे भी यह मालूम है कि मैं कल गिरफ्तार कर लिया जाऊँगा। इसीलिए मैं तुमसे पूछ रहा था इला कि मुझसे डरती हो या नहीं। स्वयं मैं अपने भयभात होता हूँ। अपनी मरी हुई आत्मा की काली छाया से मुझे भय लगता है। तुमको भी भय करना चाहिए क्योंकि आज तुम्हारे समीप कोई और नहीं है ?'

"किसलिए अतीन ?" शान्त स्वर में इला ने उत्तर दिया, "कोई नहीं है तो क्या ? तुम जो मौजूद हो।"

"हाँ इला. मैं तो हूं। लेकिन मेरे हाथों से तुम्हें बचाने वाला कौन है ?"

"तो क्या मुझे आज मारने के लिए आए हो अतीन ! अच्छी बात है, मैं तुम्हारे हाथ से मरने से भी नहीं डरती।"

"सुनो इला !' अतीन बोला, 'तुम्हारे संघ में जितने भी लड़के हैं, और जो तुम्हें 'इला दीदी' कह कर पुकारते हैं, तुम उनके माथे पर "भइया दूज' के दिन तिलक करती रही अब वे सब माँग कर रहे हैं कि तुमको संघ से प्रथक कर दिया जाय। अब वे तुम्हारी मृत्यु ही चाहते हैं।'

"क्यों अतीन मैंने कौनसा अपराध कर डाला ?"

"तुम्हारा अपराध यह है इला कि तुम संघ की बहुत जानकारी रखता हो तुम्हें बहुतों के नाम-पते मालूम है। पुलिस के जोर डालने पर तुम बहुत-सी बातें मुँह से निकाल सकती हो।"

"कभी नहीं अतीन ! मैं ऐसा कदापि नहीं कर सकूँगी।"

"तुम्हें ज्ञात है इला कि आज जो व्यक्ति अभी कुछ समय पूर्व यहाँ आया था, वह इसी आदेश को लेकर आया था और आदेश का जोर कितना है, तुम यह भी भली प्रकार जानती हो।'

अबकी बार इला चौंक पड़ी। अतीन के निकट आकर बोली, "सच कहते हो, अतीन !"

बात को टालते हुए अतीन बोला, "हमको एक समाचार मिला है।"

"कैसा समाचार अतीन।"

"आज भोर होते ही पुलिस तुम्हें पकड़ लेगी।"

"पकड़ लेने दो। मुझे मालूम है किसी न किसी दिन पुलिस मुझे पकड़ने आवेगी ही।"

"तुम्हें इस समाचार का पता कैसे हुआ ?"

"कल बटु का एक पत्र मिला था। उसने लिखा था कि पुलिस मुझे गिरफ्तार करने वाली है और वह मुझे इससे बचा भी सकता है।"

"यह कैसे ? अतीन ने भौंहें सिकोड़ते हुए पूछा।"

"यदि मैं उससे शादी करलूँ तो वह मुझे जमानत देकर बचा लेगा।"

क्रोध के कारण अतीन का चेहरा सुर्ख हो गया।

उसने पूछा, "तुमने उसके पत्र का क्या उत्तर दिया ?"

दोनों भुजाओं से अतीन को कसती हुई इला बोली, "मेरे देवता, अतीन ! मैं तुम्हें कितना प्रेम करती हूँ आज तक मैं पूरी तरह जान नहीं सकी। उसी प्रेम की दुहाई देकर मैं कहती हूँ तुम मुझे फौरन मार डालो, संकोच मत करो।"

अतीन ने इला का हाथ पकड़ उसे शयन कक्ष की ओर ले जाने को घसीटना चाहा। बोला, "चलो, सोने चलो इला, अभी सो जाओ ! अब विलम्ब मत करो।"

'नहीं अतीन, अभी निद्रा नहीं आएगी।"

"आएगी इला, आएगी। मैं कहता हूँ सो जाओ। मेरे पास नींद की औषधि भी है, मैं साथ लेता आया था। चलो इला, लेट जाओ। कहना मान लिया करो।"

अतीन के स्वरों में निवेदन भी था और आदेश भी था।

इला चौंक कर बोली, "क्या कहते हो, अतीन ? नींद की औषधि लेते आये हो ? अरे, उसकी आवश्यकता ही क्या थी ? मैं अपने जीवन का शेष समय तुमको ही दूँगी। मुझे सोने के लिए मत कहो। मैं आँखें खोले तुम्हारे सामने हँसते हुए सदा-सर्वदा के लिए सोना चाहती हूँ। क्या मेरे लिए 'क्लोरोफार्म' लाए हो अतीन ! लाओ मुझे, मैं उसे फेंक दूँ। मैं भीरू नारी नहीं हूँ। मैं भीरू हूं क्या ? और भीरू तो तुम भी नहीं हो। तुम भी बहादुर हो और एक बहादुर की तरह तुम मुझे मौत की गोद में सुला दो। मैं जाग्रतावस्था में तुम्हारी गोद में मृत्यु को प्राप्त करना चाहती हूँ। आज मेरा यह अन्तिम चुम्बन है, अतीन ! यह हमारी प्रीति की साक्षी अनन्त काल तक देता रहेगा। अतीन...अतीन...।"

और तभी बाहर बड़े जोर से सीटी की आवाज हुई।

❋ अन्त ❋

बाहर साटी की आवाज होने पर पलक झपकते ही अतीन के हाथ वाली पिस्तौल ने गर्जन के साथ आग उगल दी। इला का निश्चेष्ट शरीर अतीन के पांवों में आ लुढ़का। उसी समय अतीन ने किसी का पद चाप सुन कर मुड़ कर देखा—सामने पिस्तौल थामे हुए बटु खड़ा हुआ था। अतीन ने अपनी पिस्तौल उठाई ही थी कि बटु ने अतीन को लक्ष्य कर गोली दाग दी। दूसरे ही क्षण अतीन भी इला के शरीर पर ढेर हो गया।

दूर पर सीटी की आवाज जोर-जोर से होने लगी। बटु वहाँ से भागना ही चाहता था कि दो-चार कदम रखते ही वह भी गोली खा कर जमीन पर लड़खड़ाता हुआ गिर पड़ा। सिर उठा कर देखने पर उसने देखा कि कुछ फासले पर साक्षात यम की भांति इन्द्रनाथ खड़े हैं। उनके हाथ में पिस्तौल लगी हुई थी।

बटु की आंखें झुक गई। इन्द्रनाथ का लक्ष्य अचूक था। बटु ने अपने प्राणों को गँवा कर विश्वास घात करने का प्रायश्चित किया। दम तोड़नें से पूर्व

दोनों भुजाओं से अतीन को कसती हुई इला बोली, "मेरे देवता, अतीन ! मैं तुम्हें कितना प्रेम करती हूँ आज तक मैं पूरी तरह जान नहीं सकी। उसी प्रेम की दुहाई देकर मैं कहती हूँ तुम मुझे फौरन मार डालो, संकोच मत करो।"

अतीन ने इला का हाथ पकड़ उसे शयन कक्ष की ओर ले जाने को घसीटना चाहा। बोला, "चलो, सोने चलो इला, अभी सो जाओ ! अब बिलम्ब मत करो।"

' नहीं अतीन, अभी निद्रा नहीं आएगी।"

"आएगी इला, आएगी। मैं कहता हूँ सो जाओ। मेरे पास नींद की औषधि भी है, मैं साथ लेता आया था। चलो इला, लेट जाओ। कहना मान लिया करो।"

अतीन के स्वरों में निवेदन भी था और आदेश भी था।

इला चौंक कर बोली, "क्या कहते हो, अतीन ? नींद की औषधि लेते आये हो ? अरे, उसकी आवश्यकता ही क्या थी ? मैं अपने जीवन का शेष समय तुमको ही दूँगी। मुझे सोने के लिए मत कहो। मैं आँखें खोले तुम्हारे सामने हँसते हुए सदा-सर्वदा के लिए सोना चाहती हूँ। क्या मेरे लिए 'क्लोरोफार्म' लाए हो अतीन ! लाओ मुझे, मैं उसे फेंक दूँ। मैं भीरू नारी नहीं हूँ। मैं भीरू हूं क्या ? और भीरू तो तुम भी नहीं हो। तुम भी बहादुर हो और एक बहादुर की तरह तुम मुझे मौत की गोद में सुला दो। मैं जाग्रतावस्था में तुम्हारी गोद में मृत्यु को प्राप्त करना चाहती हूँ। आज मेरा यह अन्तिम चुम्बन है, अतीन ! यह हमारी प्रीति की साक्षी अनन्त काल तक देता रहेगा। अतीन...अतीन...।"

और तभी बाहर बड़े जोर से सीटी की आवाज हुई।

❋ अन्त ❋

बाहर साटी की आवाज होने पर पलक झपकते ही अतीन के हाथ वाली पिस्तौल ने गर्जन के साथ आग उगल दी। इला का निश्चेष्ट शरीर अतीन के पांवों में आ लुढ़का। उसी समय अतीन ने किसी का पद चाप सुन कर मुड़ कर देखा—सामने पिस्तौल थामे हुए बटु खड़ा हुआ था। अतीन ने अपनी पिस्तौल उठाई ही थी कि बटु ने अतीन को लक्ष्य कर गोली दाग दी। दूसरे ही क्षण अतीन भी इला के शरीर पर ढेर हो गया।

दूर पर सीटी की आवाज जोर-जोर से होने लगी। बटु वहाँ से भागना ही चाहता था कि दो-चार कदम रखते ही वह भी गोली खा कर जमीन पर लड़खड़ाता हुआ गिर पड़ा। सिर उठा कर देखने पर उसने देखा कि कुछ फासले पर साक्षात यम की भांति इन्द्रनाथ खड़े हैं। उनके हाथ में पिस्तौल लगी हुई थी।

बटु की आंखें झुक गईं। इन्द्रनाथ का लक्ष्य अचूक था। बटु ने अपने प्राणों को गँवा कर विश्वास घात करने का प्रायश्चित किया। दम तोड़नें से पूर्व

उसने देखा कि पुलिस ने चारों ओर से इन्द्रनाथ को घेर लिया है। इन्द्रनाथ युद्ध क्षेत्र में पराजित राजा की भाँति किन्तु सिर ऊँचा किए खड़े हुए थे। पराजय होने पर भी उनका गौरव अटूट था। बटु ने हाथों को ऊँचा उठा कर अपने सरदार को अन्तिम अभिवादन किया। इस सम्मान-प्रदर्शन के साथ ही उसके प्राण-पखेरू उड़ गये।